सुबह के घंटे

[पांच अंके सम्पूर्ण नाटक]

श्रीनरेश मेहता द्वारा प्रणीत

प्रकाशक तथा पुस्तक-विक्रेता ५, खुसरू बाग रोड, इलाहाबाद ३

प्रकाशक:

नीलाभ प्रकाशन गृह

५, खुसरोबाग रोड,

इलाहाबाद।

मूल्य : ३)

मुद्रक :

देश सेवा प्रेस

५४ हीवेट रोड,

इलाहाबाद २

अपने दादा एवम् भाभी को

आओ हम सूर्य को जन्म दें,
प्रार्थना से नहीं
आह्वान से भी नहीं—
उस उद्यन को करना ही होगा
अर्पण
संकल्प का—

उदयडाक स्वीकारो
आओ—
उत्सव है,
पोखर के ताम्रपात्र माँज
हम उदयाचल खोदें,
जलों के पिता को खोजें;
वैश्वानरवंशी वह
सूर्य है !!

कदाचित् यह प्रथम नाटक है जिसमें भारतीय राजनीति के सूत्र को सम्पूर्ण रूपे पृष्ठभूमि में स्वीकारा गया है। एकाध घटना के काल को किंचित् परिवर्तित करना पड़ा है। यह नाटक मूलतः साहित्य एवम् राज-नीति के सम्बन्धों पर आधारित है। मतभेद सम्भव हैं, किन्तु रसज्ञ इस मतभेदोपरान्त भी कुछ आप्लावित हो सके तो यह प्रयास निरर्थक नहीं होगा। कुछ बातें जिन्हें मैं बचा गया हूँ, कुछ सत्यों को लिखकर छोड़ देना पड़ा है—आदि बातें ऐसी हैं जिन्हें आगामी संस्करणे समाविष्ट किये बिना निस्तार नहीं, क्योंकि तब तो धर्म भ्रष्ट हो जायेगा। इस संदर्भे एक निवेदन आवश्यक यह है कि अतिरिक्त भाव न खोजे जायँ

इस नाटक का एक अति आरम्भिक रूप रेडियो से प्रसारित हुआ था। किन्तु दोनों में उतना ही अंतर है जितना कि एक बन्दी एवम् उन्मुक्त व्यक्ति में।

नाटक की मंचीयता के विषये यही कहना है कि 'सूत्रदृश्य' की योजना ही इस हेतु रखी गयी है। घटनाकाल एवम् स्थान की पृष्ठभूमि अत्यन्त सुदीर्घ है तथा उसकी मंचीयता इसी रूपे सम्भव हो सकती थी। अस्तु—

यह नाटक 'संकेते' अपूर्ण ही छपा। अनेक कठिनाइयों के कारण भाषा सम्बन्धी मूलभूत तत्सम-तद्भव की त्रुटियाँ यहाँ दिखेंगी। विदेशी शब्दों के तद्भव रूप को ही कोई भाषा ग्रहण करती है। भाषा सम्बन्धी इतनी मोटी बात का उल्लेख करते हुए मुझे स्वयं कोई प्रसन्नता नहीं हो रही है, किन्तु विगत दिनों में अनेक लोगों के द्वारा, जिनमें कई राजनीतिज्ञ हैं तो कई साहित्यिक तथा कुछ साहित्यिकवादी भी हैं, कई तरह की भूलें हुईं। हिन्दी, उर्दू नहीं है। हिन्दी में कोई अन्य भाषा शैली बदल कर नहीं आ सकती है। हिन्दी, अभी व्यवस्था पाने

को है । हिन्दी को अभी बहुत कुछ अपनी बोलियों की विशेषताओं को लेना है। जिनमें पदविन्यास, नामधातु आदि भी सम्मिलित हैं। ऐसी स्थिति में ग़लत रूपों का छपना कोई शोभनीय बात हो, सो नहीं।

नाटक का विषय—वस्तु विवादास्पद है, किन्तु आक्षेपात्मक नहीं। मुझे जो कहना था वह समाप्त हुआ।

नमस्कारान्ते—

३३, कैनिंग लेन
नयी दिल्ली—१

श्रीनरेश मेहता

सुबह के घंटे
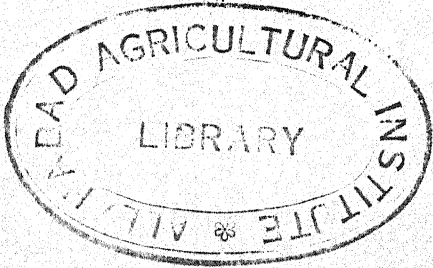
श्रीनरेश मेहता

निर्देशन

समुद्र-तट पर एक प्रमुख जेल का वह भाग जहाँ फाँसी के बन्दियों को रखा जाता है। अँग्रेज-युगीन किले के पथरीले बुर्ज में यह आगार है। बन्द सींखचे वाले द्वारों में मोटी-मोटी साँकलें लगी हैं, ताले पड़े हैं। दूर सामने लोहे का बड़ा फाटक दिखलायी पड़ता है, जिसमें एक छोटी खिड़की है, जो सदा बन्द रहती है। जब कोई आता है तब वह खिड़की रोते हुए कुत्ते की सी आवाज़ में खुलती है। तभी बाहर से संतरी की वर्दी एवं बन्दूक दिखती है। आने के नाम पर केवल संतरी के और कोई नहीं आता है—हाँ, जो वस्तुएँ इन नियमों को लाँघ कर आती हैं उनमें धूप, अँधार तथा ध्वनियाँ आदि हैं। कोठरी में पत्थरों का ऊबड़खाबड़ चबूतरा दाहिने हाथ पर बना है। उस पर एक काला कम्बल पड़ा है। बायें हाथ पर पत्थर का प्याला फ़र्श में उत्कीर्णित है। छत में पीछे की ओर एक गहरा गवाक्ष ऊपर से नीचे की ओर बना हुआ है, जिसमें से आकाश, नीली चिन्दी-सा दिखलायी पड़ता है—सींखचे लगा गवाक्ष। इसी गवाक्ष द्वारा समुद्र गर्जन अनवरत सुनायी पड़ता है। दाहिनी दीवारें लोहे का एक कड़ा है, जिसमें लौह शृङ्खला लगी है, जिसका एक छोर बन्द एमन के पैरों में बद्ध है। आगारे इतनी दुर्गन्ध है कि उसकी समस्त विकृति बन्दी एमन मुखे एक वृत्ताकार रूपे नाक के चारों ओर स्पष्ट दिखती है।

बन्दी एमन, उन्नत ललाट का अधेड़ व्यक्ति है। जिसमें ये तीन लक्षण ही प्रधान हैं—एक तो सुन्दर धवल एडवर्ड डाढ़ी, दूसरे सुदीर्घ उत्कीर्णित नासिका, तीसरे पारदर्शी मर्मस्पर्शी आँखें, जिनकी चमक सिंहों-की-सी है। मंच की ओर उसकी पीठ है और वह पृष्ठभूमि के उपरोक्त वातावरण को उसके अँधेरे के साथ घूर रहा है। जेल-वस्त्रों में मैल काटती है जिसे वह रह-रह कर खुजलाना

चाहता है किन्तु दोनों हाथों में हथकड़ियाँ हैं इसलिए दीवार से बैलों की भाँति रगड़ लेता है।

मध्य रात्रि में कार्तिकी पूर्णिमा स्नात चमेली सी गोरी छितरी है। किले की दीवारें तक इस बेला सुन्दर हो उठी हैं। सामने के मैदान में हल्का भीगा कुहरा गालों में उड़ रहा है। बीच-बीच में उल्लू की धुप-धुप स्पष्ट है।

जेल के कांस्य घंटे में दूर बारह का गजर बजता है—जो इस निस्तब्धता में देर तक ध्वनित रहती है। पुलिस की सीटियाँ झनझनाती हैं। गश्तियों की होऽऽ... होऽ... होऽऽ...विलम्बित स्वरों में किले के पत्थरों से टकराती प्रतिध्वनित होने लगती हैं। पेड़ों पर के सुस्ताते कौवे आदि चीखने लगते हैं। कुत्तों की भों-भों एवं उनका एकान्त रुदन भयावना लगता है। दूर, कभी कोई मल्लाह खाड़ी के थपेड़ों में किसी को डाकता सुनायी पड़ता है।

आगार के दरवाज़े पार बायें हाथ पर एक लैम्प-पोस्ट की पीली बत्ती का आभास है जो कुहरे में लिपटी है इसलिए उसका खंभा आदि नहीं दिखता है। वहीं पर ऊपर की ओर जेल के परकोटे 'टावर आफ लन्दन' शिल्प के दिखते हैं आभास रूपे।

बन्दी एमन जब तक सोचता होता है तब तक वह बाहर वाला दरवाजा खुलता है। संतरी दिखलायी पड़ता है। गार्ड प्रवेश करता है। पुराने गार्ड को सैनिक ढंग से यह नया वृद्ध गार्ड रिलीज करता है। नया पोस्ट सम्हालता है। यह नया वृद्ध गार्ड विशिष्ट प्रकार का व्यक्ति है। इसकी भौहें तक सफ़ेद होने आ गयी हैं। बरानकोट के बोझ से उसके कंधे तक झुके-से लगते हैं। बरानकोट के ऊपर उसने पेटी बाँध रखी है जिसमें वह तालियों का झूमर पुराने गार्ड से लेकर बाँधता है। पुट्ठे पर संगीन, जो चलने पर हिलती है। बन्दूक वही सैनीय ढंग से कंधे पर है।
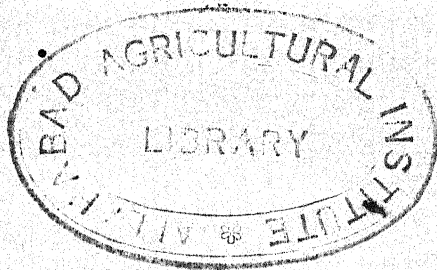
प्रथम अंक

सूत्र दृश्य १

[यवनिका उठने पर एमन मंच की ओर मुँह किये है । वह अपना सिर दरवाज़े के सींखचों पर टिकाये है। छत घूर रहा है । जैसे गजर बजता है, वह मंच की ओर से पीठ मोड़ लेता है तथा पृष्ठभूमि के वातावरण को घूरने लगता है।]

एमन—(गम्भीर स्वर, सोखचे पकड़े — स्वगत—गजर समाप्त होने पर) एक...... दो......तीन......चार......पाँच ......चार......तीन ......दो ......एक......बस ?

(पृष्ठभूमि में वही गार्ड की अदला-बदली वाला दृश्य चलता है।)

एमन—तो ये अन्तिम बारा बजे थे ? भोरे शेषे मात्र पाँच स्वर ? इसके बाद फिर नया सूर्य लेकर संसार, काल-सत्य की खोज में दौड़ पड़ेगा ? कुछ, नहीं रहेंगे; अधिकांश रहेंगे और कुछ नये इस क्रम के लिए जन्म लेंगे। सब कुछ यथावत् रहेगा। विगत, अनागत के क्रम को नहीं रोक सकता। हम न थे तब भी सत्य था, न होंगे तब भी सत्य रहेगा। सत्य, व्यक्ति-सापेक्ष्य से परे है—तब क्यों ये सोचते हैं कि मेरे विद्रोह को फाँसी देकर विद्रोह की

संज्ञा ही समाप्त हो जायेगी। और तुम कौन हो जो यह नियन्ता का ढोंग किये हो? किसी की नियति के निर्णायक तुम कैसे? तुम्हारी राजाज्ञाओं से जन्म नहीं होते तो फिर मृत्यु लादने का अधिकार...दम्भ है!

(तभी पृष्ठभूमि में संतरी स्वर—कड़क आवाज़ें)

संतरी—**(दूर से, डाक रूपे)** गार्ड। सात नम्बर सेल। ताला बेड़ी आलरेट ऽऽ...?

गार्ड—**(उसी रीते)** सात नम्बर सेल। ताला बेड़ी आलरेट ऽऽ...!

संतरी—**(अधिक दूरी पर डाक रूपे)** गार्ड। बार नम्बर सेल। ताला बेड़ा आलरेट ऽऽ...?

(और पृष्ठभूमि में यह प्रति-सातर्कता डूब जाती है।)

एमन—आल राइट! **(पीड़ित हास्य संगे)** कैसा विचित्र है यहाँ। कितना विभिन्न है शेष जीवन से यह। हम आपसे सहमत नहीं—यह विद्रोह—और चूँकि इस असहमति से आपकी सत्ता पर आँच आती है इसलिए—फाँसी! विद्रोह और फाँसी! फाँसी और विद्रोह! नेहीं, कदापि नेहीं, कभी भी नेहीं।

(पास आते हुए गार्ड की बूट टापें—टप्, टप्, टप्)

गार्ड—**(किंचित हास्य संगे)** क्या नेहीं एमन साब? सोये नहां? **(दीर्घ साँस लेकर)** हाँ......**(थोड़ा चुप)** कित्ता जाड़ा है अभी से हाथ थीजने लगे कार्तिक में तो फिर पूस में क्या होगा?

(दोनों हथेलियाँ रगड़ता है।)

एमन—**(अन्यमनस्क भाव संगे)** हाँ लखन!

लखन—सिगरेड पीजिएगा?

एमन—क्या तुम्हें डर नहीं लगता कि फाँसी के क़ैदी को सिगरेट......

लखन—**(हँसते हुए)** अरे एमन बाबू। सिगरेट न मना है! मैं तो मिलिट्री

आप दे रहा हूँ। (हँसते हुए बीड़ी का बंडल हाथों से रगड़ता है पहले। उपरान्त उसमें से दो निकालता है एक ही तीली से दोनों जला कर हवा में हिलाता है। तब एक एमन को देता है। इसके साथ ही वह बड़बड़ाता भी जाता है :) जेल की मनाही को भी ख़ूब ही चलायी आपने। कुछ को सरकार ख़ुद आराम देती है और कुछ को हम लोग। अरे एमन साब ये होना चाहिए ये—रुपैया ! ये न हो तो घर जेहल है और हो तो जेहल घर है। जेहल में क्या नहीं मिलता ? सब मिलता है साब, मगर जरा...आँख बचा के...अब आप तो समझते हैं सब ! लीजिए एमन साब। लखन के पास और क्या हो सकता है ? इत्ते बड़े आदमी को भी बीड़ी पिलानी पड़ रही है......(तभी उसे ज़ोरों की खाँसी घेर लेती है—दम भर उपरान्त) मिलिट्री छाप के दो फ़ायदे जरूर हैं बाबूजी। एक तो कड़क होती है—असली होती है न, इसलिए ! और दूसरे गले के नीचे तक आग फूँक देती है। धुँआ अगर कलेजे से न उठे तो बीड़ी का मजा ही क्या ?

एमन—हाँ, तुम ठीक ही कहते हो। आग अन्दर तक होनी चाहिए।

लखन—(जो जाने को ही होता है, पर रुकते हुए) जी क्या कहा बाबूजी आपने ?

एमन—मैंने नहीं कहा लखन ! मैंने तो तुम्हें दोहराया था......(कहीं दूर खो जाता है।) क्या बाहर भी ऐसी ही धुंध है ?

लखन—अजी अभी क्या है साब। अगहन के बाद से देखिएगा—और फिर यह तो खाड़ी का किनारा है। इधर पूस लगा नहीं कि दिन भर ऽऽ कुहरा भरा रहेगा, लेकिन मैं बहुत मूर्ख हूँ एमन साब ! और मूर्ख नहीं होता तो भला मेरी बीवी भाग जाती ?

एमन—(किंचित हँसते हुए) अपने को काहे कोसते हो लखन !

लखन—(आवेश संगे) क्यों नहीं कोसूँ साब ! यही ले लें......जानता हूँ

सबेरे आपको......और मैं खड़ा-खड़ा बातें बना रहा हूँ। क्या मैं आदमी हूँ एमन साब ? आप हम जैसे गरीबों की भलाई के लिए फाँसी चढ़ रहे मैं...मेरे पास सारी तालियाँ होते हुए भी......

एमन—(**कुछ मुक्त-हास से**) मुझे भगाने नहीं दे रहे हो......इसीलिए तुम अपने को कोस रहे हो ? लखन ! मान लो ऐसा हो भी जाय तो तुम क्या सोचते हो कि मैं भाग पाऊँगा ?...लेकिन मेरे भाग जाने के बाद तुम्हारा क्या होगा ? लेकिन क्यों भागूँ ?....पलायन निष्कृति नहीं है लखन ! संघर्ष निष्कृति है !

लखन—हाँ साब। आप जैसे वीरों पर ही तो यह परथम्मी ठहरी है...और एक हम लोग हैं...सच कहता हूँ साब ! ऐसी नौकरी से तो भीख भली। आप जैसे देवताओं को तकलीफ पाते देखता हूँ तो बस...पर हम बिचारे गरीब कर ही क्या सकते हैं ?...बाबूजी। आदमी सब कुछ हो, गरीब न हो ! अब आप ठहरे राजा बाबू !!

एमन—(**पीड़ित, आत्म-संयम संगे**) राजा बाबू ! किसने कहा तुमसे ! ख़ैर, लेकिन एक बात इस कैदी को सदा याद रखना लखन ! आज तक सारे बड़े काम गरीबों ने ही किये हैं—वह चाहे महल बनाना हो अथवा इतिहास का निर्माण ! गरीब ब्रह्मा होता है लखन !

(लखन चलने को होता है।)

लखन—बाबूजी, आप ठीक ही कहते होंगे, किन्तु...गरीबी कभी देखी नहीं होगी आपने......

[गार्ड लखन बूट-टापें बजाता दाहिने से चला जाता है, एमन दर्शकों की ओर मुँह करता है।]

एमन—(**स्वगत**) लखन ! तुम्हारी बात में सत्यता यही है कि हम सुदीर्घ पूर्व की अपनी स्थिति को भूल जाया करते हैं। किसान घर में पैदा होने

पर भी अपने ही को कभी भूल गया था...पर भूल नहीं सका लखन! अपना घर......माँ......पिता......

(मंच पर सहसा अँधेरा होता है, दृश्य बदलता है।)

प्रथम दृश्य

[एक किसान का छोटा-सा घर। टूटे छाजन का ओसारा, जिसके सामने खुला आँगन। बीच में दरवाज़ा, जो भीतर की कोठरी की ओर जाता है, जहाँ एक बखार दिख रही है। इस दरवाज़े के दाहिनी ओर चक्की है तथा बायीं ओर ओखली है, खम्भे के पास। खम्भे से सटी हुई मूसल रखी है। खम्भे में छाछ करने के लिए रस्सियाँ बँधी हैं। चक्की के ऊपर दीवार में मिट्टी का दीपाधार बना है, जिस पर टिन की डिबरी रखी है, जिसकी लौ की कलास, तिलक-सी दिख रही है। दरवाज़े की चौखट पर लाल-पीले मटमैले कपड़े की बन्दनवार टँगी है। उसके ऊपर गणपति की मूर्ति दीवार में ही सिंदूर रँगी छबी हुई है। चक्की वाली दीवार में जो खूँटी है उस पर पंचांग टँगा है तथा दूसरी दीवार पर ढोलक टँगी है। दीवारों पर धोतियों पर आने वाली शंकर-पार्वती आदि की छबियाँ चिपकायी हुई हैं। बायें हाथ को बाहरी दरवाज़ा है, जिस पर ढाक के पत्तों का ढँकाव है। पत्ते सूखे पीले हैं। मकान मालिक बापू, किसान है, जो ओसारे में मचिया डाले चिलम पी रहा है। वह बंडी पहने है, जिसमें टिन के बटन सिले हुए हैं तथा धोती घुटनों ऊँची है। उसकी स्त्री छोती, इसी बाहरी दरवाज़े से प्रवेश करती है। मिट्टी के घड़ों का बेवड़ा लिए वह आती है। बापू के पीछे से होकर वह अन्दर की कोठरी में चली जाती है। लौट कर कंधे की नेज (रस्सी) चक्की के पास पटकती है और वहीं पड़ी हँसिया उठा कर बाहर जाने को होती है।

छीती, गेहुँए रंग की सलोनी स्त्री है। दोनों गाल तथा ठोढ़ी गुदे हैं। एक फटा घाघरानुमा कुछ पहने है तथा एक लुगड़ा ओढ़े है। सवेरे के आठ बजे हैं।]

बापू—एमन कहाँ गया छीती ?

छीती—(रुकते हुए) माल में घास काटने।

बापू—ला, एक लोटा भर दे तो !

[जाती है। कलसे में पानी लेकर लौटती है। बापू उठकर पानी पीता है, तभी बीच में......]

बापू—ये तो जमींदार के कुएँ का पानी है। वहाँ से लायी ?

छीती—(झल्लाते हुए) और नहीं तो कहाँ से लाती ? बाकी में तो आग लग गयी।

बापू—जानती है उस कुएँ के लिए डौंडी पिटवा दी गयी है।

छीती—वहाँ से न लाती तो क्या पीते ? अपना सिर !

(हाथ चमकाती है।)

बापू—(ताव के साथ) तेरा बाप पटेल है, इस भरोसे मत रहियो समझी ? अब जमींदार के जूते कौन खायगा तू या मैं !

छीती—अरे तो क्या भगवान के दिये पानी पर भी जमींदार रोक लगायेगा ? आँखें फूट जायेंगी उसकी।

[तभी जमींदार के दो कारिन्दे एमन को पकड़े प्रवेश करते हैं। एमन दस बरस का लड़का है— साँवला सा। कच्छे की भाँति पंचा लपेटे है। अपने पिता की फटी-सी बंडी पहने है। गले का तावीज़ दिख रहा है। उसके एक हाथ में हँसिया और दूसरे में थोड़ी घास है।]

सुमान—(एक कारिन्दा) जमींदार की आँखें तो बाद में फूटेंगी, छीती की जरूर फूट गयी हैं। अब रोना अपने करम को।

बापू—क्यों क्या बात है सुभान भैया ?

सुभान—तुम्हारी ही तो बगीची है, जो ऐमन मेमने साब घुसके फलफूल खा रहे थे।

बापू—क्यों रे, जमींदार की बगीची में......

एमन—नहीं बापू। मैं तो चौधरन की बावड़ी के पास बैठा घास काट रहा था।

हीरा—(दूसरा कारिन्दा) तो साले हम झूठ बोलते हैं ? ले चलो सुभान इसे।

छीती—हीरा भैया, तुम्हारे हाथ जोड़ती हूँ। छोड़ दो इसे !

एमन—नहीं माँ ! ये सुभान माँ-बेन की गाली देता आ रहा है रस्ते भर और...

सुभान—अरे साले, जब जमींदार साब के सामने जायेगा तो......

हीरा—ले चलो जी, रोज साला संतरे-नींबू तोड़ता है। उस दिन ये छीती भी जाने क्या तोड़ रही थी ?

सुभान—तो तुमने शिकायत क्यों नहीं की !

हीरा—अरे मैंने कहा बापू की गाय जमींदार की बगीची में ही आ जाय तो क्या बुरा है..... दुधारू गाय की तो लात में भी दूध होता है......

(कुटिल दृष्टि से छीती की ओर देखता है।)

सुभान—चल बे बछड़े, चल......

(दोनों हँसते हैं।)

बापू—साले, जमींदार के कारिन्दे क्या हुए, गाँव भर की इज्जत लोगे ?

हीरा—अबे जा, चिलम पानी के लिए टेंट में धेला नहीं और इज्जत वाला बना है। कल ही मकान की कुर्की होगी, देखें फिर तेरी इज्जत क्या रहती है !

छीती—अरे हीरा भैया ! तुम तो नाहक ही बिगड़ रहे हो।

सुभान—देख छीती, इसका बुरा नतीजा होगा।

बापू—तू चुप कर छीती ! जहाँ तक हम दबते हैं, ये दबाते ही चले जाते हैं।

सब जानता हूँ, इसे जुआर नहीं दी इसीलिए यह हीरा ऐंठ रहा है। इन्हें दया थोड़े ही है कि अकाल सिर पर मँडरा रहा है और इन्हें दे देता तो आज तक खाते क्या ?

हीरा—अच्छा तो अब आओ हवेली और लौंडे को छुड़ाओ। चलो सुभान !

[और यह कहता हुआ हीरा एमन को दो धौल मारता हुआ ले चलता है। एमन दोनों को जलती आँखों से देखता है किन्तु......तभी जमींदार प्रवेश करता है। जमींदार अधेड़ आयु का व्यक्ति है। वह नीम की दतौन करते हुए प्रवेश करता है। धोती तथा बिहारी बनियान पहने है। मैले से यज्ञोपवीत में तालियों का झूमर झूल रहा है। काले शरीर तथा लाल आँखों का यह व्यक्ति अत्यन्त डरावना सा लगता है। जमींदार को देखते ही बापू हाथ जोड़ कर खड़ा हो जाता है तथा छीती थोड़ा-सा घूँघट निकाल मुँह फेर कर खड़ी रहती है।]

जमींदार—क्या बात है बापू ? कैसे हो !

बापू—आपकी किरपा है मालिक !

जमींदार—(**जैसे सहसा सुभान, हीरा को देखा हो**)—क्या बात है रे हीरा ! इस लौंडे को काहे पकड़े खड़ा है ?

हीरा—मालिक ! ये लौंडा रोज-रोज बगीची में घुस कर नुकसान करता है हम कहा चलो बच्चा है जाने दो......

सुभान—(**बात का सूत्र पकड़ते हुए**) पर आज तो हद्दै होगयी मालिक ! (**और जेब से संतरे, चार नीबू निकाल कर बताते हुए**) अब आज इन पर हाथ मारा।

एमन—नहीं बापू ! हम नहीं तोड़ा, झूठ है यह।

जमींदार—क्या बगीची में घुसा था यह सुभान ?

(आँखें तरेरते हैं।)

हीरा—कोई एक दिन की बात है सरकार ! अरे जब माँ-बाप की सह मिले तभी न जाता होगा मालिक !

जमींदार—आज तक हमें क्यों नहीं बताया ? क्यों बापू ! बगीची तुम्हारे बाप की है ?

बापू—नहीं मालिक ! पर लौंडा तो घास काटने गया था, बहिरे था यह तो...

जमींदार—तो हमारा कारिन्दा झूठ बोलता है ? ले चलो जी लौंडे को बाँध के धूप में पटक दो ।

छीती—(वैसे ही) नहीं मालिक, लरिका है । समझाय दिया जायेगा ।

जमींदार—हूँ ! लड़का को समझा दिया जायेगा और तुझे ? तू क्यों पानी भरने गयी थी ?

बापू—मालिक ! छमा हो, हम गरीब तो ढोर हैं सरकार ! ध्यान थोड़े ही रहता है कि कौन चरती है और कौन परती ? टिटकार दें हुजूर ! न हो लतियाय दें ।

जमींदार—अबे साले हमही निगरानी करें । डौंडी पिटवा दी फिर भी तेरी छीती को परवाह नहीं । हम तरह देते हैं तो तुम समझते हो कि तुम्हारे बाप का राज है ! हमारा सारा बकाया रुपया आज नहीं आया तो कल मकान की कुर्की हो जायेगी, समझे !

बापू—पर मालिक तीन सौ एक दिन में हम गरीब कहाँ से लायें ? कुछ तो मोहलत मिलनी चाहिए ।

जमींदार—अबे साले, पैसे का पैसा दो और फिर मोहलत भी दो । हम नहीं जानते । कल दरोगा जी कुर्की के लिए आजायेंगे ।

छीती—परथम्मीनाथ ! हम गरीबों को उजाड़ कर क्या मिलेगा ?

जमींदार—तू तो जमींदार से लोहा लेने चली है ।

छीती—(हाथ जोड़कर) नहीं मालिक !

जमींदार—गाँव में जब किसी की मजाल नहीं कि हमारे कुएँ का पानी ले, तेरी हिम्मत कैसे हुई ?

छीती—(चुप)

जमींदार—बदजात ! मैं सब समझता हूँ ।

बापू—(पैरों पर गिर कर) सरकार दया करें । घर न छीनें । जो कहेंगे सिर आँखों पर धार......

जमींदार—(उसे ठोकर मारते हुए) हम कुछ नहीं जानते ।

एमन—तुम इस राक्षस के पैर गिरते हो बापू ।

जमींदार—(एकदम आग हो कर) क्या कहा बे ?......सुभान लगा तो दो झापड़ साले के ।

[सुभान एमन को दो झापड़ मारता है । किन्तु एमन रोता नहीं है, बल्कि उसकी आँखों से चिनगारियाँ निकलती हैं ।]

सुभान—देखा हुजूर ! बित्ते भर का लौंडा कैसा मगरूर है ? और लगा दूँ हुजूर ?

छीती—(दौड़ कर जमींदार के पैरों गिरती है ।) छमा करो मालिक ! बच्चा है, मैं समझा दूँगी ।

जमींदार—हम कुछ नहीं जानते । कल सब मगरूरी निकल जायेगी । ले चलो जी इसे ।

छीती—आपका दिया हुआ ही तो खा रहे हैं मालिक ! अबकी छोड़ दो मालिक ! केले का पत्ता है हुजूर ! समझा दूँगी, बेर के पास लहराया नहीं जाता ।

जमींदार—(एकदम लाल हो कर) क्या कहा हरामज़ादी तूने ? हम बेर हैं ?

(यवनिका पात)

द्वितीय दृश्य

[दूसरे दिन प्रातः बेला। बापू किसान का वही घर। एमन बापू के लिए चिलम भर कर लाता है। बापू उसी मचिया पर बैठा है। पृष्ठभूमि में छीती काम करते हुए इधर-उधर जाती-आती है।]

एमन—मैं उस जमींदार के गोरू चराने नहीं जाऊँगा बापू !

बापू—(एकदम बिगड़ता हुआ) तू गोरू चराने नहीं जायेगा, ये भी कह देगी कि हवेली में काम करने नहीं जायेगी—गाँव में रहना है कि नहीं ?

छीती—(तभी तुनक कर) तुम उस राछस को जानते हो ?

एमन—घर की रोटियाँ खायें और साले जमींदार का काम करें। तुमसे तय हुआ है, हम से नहीं।

बापू—(तभी उठ कर उसे एक चाँटा मारते हुए) तो तू बगीची में क्यों गया था ? और ये साली कुएँ पर क्यों गयी थी ? गाँव तुम्हारे बाप का है ?

(तभी जमींदार के कारिन्दे और दरोगा प्रवेश करते हैं।)

दरोगा—(हीरा सिंह से) यही है उस हरामी का मकान ?

हीरा—जी हाँ हुजूर।

दरोगा—(बापू से, जो हाथ जोड़े खड़ा होता है।) क्यों बे ! तेरा नाम बापू है ? तूझे तो साले कहीं देखा है !

बापू—नहीं मालिक ! मैंने तो कचहरी का मुँह भी नहीं देखा।

दरोगा—चलो फिर, वो हसरत पूरी कराऊँ कि हिम्मत सिंह दरोगा ही बस याद रहे। (कहकर अपनी मूँछें उमेठता है। जोरों से मचिया पर बैठता है तथा छीती को घूरता है जैसे उसके अंग-अंग उतार करके देख रहा हो।) तेरी औरत है बे ?

बापू—हाँ मालिक !

दरोगा—अबे ओ मालिक के बच्चे, हरामजादे, साले, कमीने, जमींदार साब का मकान खाली अभी नहीं किया ?......(छीती से) बोलती नहीं ? क्या नाम है तेरा ?

छीती—छीती, दरोगा साब !

दरोगा—हूँ हूँ......फेंक दो जी इन सालों का सामान। बहुत मगरूरी है इन्हें।

हीरा—अरे साब ! इनके गरूर का क्या कहना ?

दरोगा—देख रहा हूँ मगरूरी इसकी (छीती की ओर देखते हुए) हिम्मत सिंह के पाले नहीं पड़ी है अभी !

बापू—मगर हुजूर ! मोहलत मिलनी चाहिए।

दरोगा—तेरे बाप की सरकार है न ? जानता है सात समंदर पार अँग्रेज रहता है और यहाँ हिम्मत सिंह और जमींदार, दो राज करते हैं। सुना दे अपनी घरवाली को, तेवर तोड़ दूँगा सब !

(दोनों कारिन्दे सामान भीतर से ला-ला कर पटकते जा रहे हैं।)

बापू—हम खुद ही उठा लेंगे मालिक !

छीती—न्याय करो दरोगा जी ! बाप-दादों की एक यही तो निसानी है और इसे भी ले लेंगे तो हम क्या करेंगे मालिक ! देर-सबेर लौटा ही देंगे रुपया। कोई भागे थोड़ी जाते हैं।

दरोगा—(छीती की ओर देखते हुए) अरी, दूसरे का रुपया लेते वक्त तो मीठा लगा। लौटाओगी नहीं तो कुर्की नहीं होगी तो क्या शादी होगी ? वाह री छीती ! तेरा तो इंसाफ़ ही अलग है। जैसी तू, वैसा तेरा न्याय ! देखो बापू ! हम तो कोरट के फैसले की तामील करने आये हैं। हम यही न कर सकते हैं कि एक-दो दिन कुर्की रुकवा दें, पर पगले ! इसके लिए भी तो......

(और तर्जनी एवं अँगूठे से रुपया बजाने का संकेत करता है।)

छीती—अब बड़े बाबू ! हम गरीब मनई के पास क्या है ? फूटा घेला भी तो नहीं जो आपकी पूजा करें।

दरोगा—(**बड़ी जोर से हँसते हुए**) तो तू क्या सोचती है कि बिना टके के काम बन जायेगा ? पगली ! नन्दी की पूँछ छूने का भी पैसा लगता है, तभी संकर खुश होते हैं—फिर हम तो ठहरे पुलिस के आदमी ! और छीती ! पूजा भी कई तरह की होती है।

(**कुत्सित तरह से छीती को देखता है।**)

बापू—आदमी में ही महाराज ! भगवान की दया का वास रहता है।

दरोगा—(**एक दम लाल-पीले ढंग से**) अबे साले ! पुलिस को ही भागवत सुनाने चला है ? तेरे हित की बात कही। नहीं जी, फेंक दो गली में इन हरामजादों का सामान। ठोकरें खायेंगे तब दारोगा हिम्मत सिंह की पूजा करेंगे। लात के देव बात से नहीं मानते।

[**तभी जमींदार साब टहलवे के साथ प्रवेश करते हैं। टहलुवा हुक्का पकड़े है और जमींदार साब नली मुँह में लगाये गुड़गुड़ाते आते हैं। मलमल का कुर्त्ता, बारीक धोती, बाल कढ़े हुए, मुँह में पान, हाथ में छड़ी, गोया ससुराल आये हों।**]

जमींदार—(**धुंआ छोड़ते हुए**) तो आपने हमारी भी बात नहीं मानी दरोगा साब !

दरोगा—मानने न मानने की बात ही नहीं उठती **जनाब** ! कोर्ट तो भगवान है साब ! न करें अपना काम तो हुकुम उदूली नहीं होती ?

जमींदार—खैर जैसी आपकी मर्जी। अपनी परजा की रच्छा करना हमारा धरम था, सो कह दिया।

दरोगा—तो आप अपना धरम बचाने के लिए हमारा धरम भ्रस्ट करने चले थे ?

बापू—ऐसा न करें मालिक! (जमींदार के पैरों गिर कर) न्याय करें धर्मावतार! हमने देने से उजर किया कभी आपसे? घर न छीनें, हम तो चाकर ठहरे। टहल कर के, सानी-पानी करके देर-सबेर चुका देंगे मालिक!

छीती—और न देंगे मालिक तो पाप की गठरी लिये कौन बैतरनी पार करने देगा मालिक?

(तभी जमींदार और दरोगा आँखों में कुत्सित संकेत करते हैं।)

जमींदार—देख छीती! तुम लोगों को हमने कभी पराया नहीं समझा। दरोगा साब को तो हमने पहले ही इनकार किया। अब देख रही हो बात हमारे भी काबू के बाहर है। कोरट के हुकुम की तामील न होने से क्या होता है यह तुझ जैसी गँवार को क्या बतायँ?

छीती—अब गँवार न होते तो मालिक, सेवा कैसे कर पाते? पर इस बार जैसे भी हो बचा लें बस धर्मावतार!

जमींदार—दरोगा साब! छीती को देख कर ही मैंने हमेशा इन दोनों बाप-बेटों की हरकतों पर जब्त किया है। यह बिचारी रायटोले के पटेल की लड़की है—कैसे के पाले पड़ी है कि क्या बताऊँ। खैर छोड़िए जनाब, आपको हमारे कहने से इस बार कोई-सा रास्ता निकालना ही होगा।

दरोगा—रास्ता? भली चलायी आपने जनाब! कोर्ट न हुआ धरमशाला हुई। लौट कर हमें भी तो जवाब देना होगा। कई अफ़सर हैं हमारे भी तो। कोई मजाक तो है नहीं—आप सब जानते बूझते.....और संतमेत में बताइए कैसे हो सकता है? नामुमकिन है जमींदार साब!

जमींदार—देखो बापू! दरोगा साब की कुछ सेवा करो। सही कहते हैं दरोगा साब! (एक तरफ ले जाकर) अरे समझदारी से काम लोगे तो सब ठीक हो जायगा, समझे, तुझ पर सच्ची दया आती है।

बापू—हाँ सरकार! हम तो गरीब परजा हैं आपकी। अब आपके मन में दया

न होगी मालिक तो किसी गैर के मन में होगी ? बचा लें मालिक ! जिनगी भर गुलामी हम करेंगे।

जमींदार—अच्छा-अच्छा, मगर दरोगा साब को कागज़ पर दिखाना तो होगा ही कि मकान खाली करवाया गया—सरकारी कानून है यह तो। इसलिए न हो तो तुम हवेली की गोशाला में दो-चार दिन के लिए आ जाओ। और सुनो, छाँती को समझा देना फिकिर न करे और तू दरोगा साब की टहल कर देना—सब ठीक हो जायेगा। हम अन्दर कह देंगे हवेली से सारा प्रबन्ध हो जायेगा।

बापू—(ज़मींदार के चरणों में गिर पड़ता है—ज़ोरों से) धर्मावतार ! कैसी दया पायी अपनी परजा के लिए है आपके मन ने जैसे राजा राम !

[बापू के घर का सामान पड़ा है बिखरा हुआ। जमींदार और दरोगा आँखों में कुत्सित संकेत लिये कुटिल मुस्कान से मुसकुराते हैं।]

जमींदार—(दरोगा की बाँह पकड़ते हुए।) नहीं दरोगा साब ! इस बार आपको......

दरोगा—मगर सरकारी हुकुम की तामील......

(दोनों जाते हैं—पटाक्षेप)

तृतीय दृश्य

[उसी दिन रात का दूसरा प्रहर है। जमींदार साब की हवेली का बैठक के बाहर का सेहन है, जिस पर टिन की छत है। सामने पक्का आँगन है बड़े से तख्त पर जमींदार साब बिस्तरे पर लेटे हैं बायीं तरफ़। दूर, दाहिनी तरफ़ एक पलँग पर दरोगा साब बिस्तरे पर लेटे हैं। बीच में (सेहन में एक

दरवाज़ा है—बैठक का जिस पर चिक पड़ी है—उसके सामने ही) लम्बे हण्डे का लैम्प एक तिपाई पर मध्यम ज्योति से जल रहा है। बीच के दरवाज़े के बायीं ओर (जिधर जमींदार लेटे हैं, उन के सिर ऊपर) श्री कृष्ण का चीर-हरण वाला प्रसिद्ध चित्र टँगा है तथा दाहिनी ओर (जिधर दरोगा लेटे हैं उनके सिर ऊपर ; सन १९४४ के दिल्ली दरबार वाला चित्र कीलों से ठुका हुआ है। जमींदार के सिरहाने हुक्का रखा है, एक तिपाई पर दो एक शराब की बोतलें पड़ी हैं।

बापू, दरोगा साब की टहल कर रहा रहा है। पायजामा उन का ऊँचा चढ़ा है। बापू मुक्कियाँ मारते-मारते थक चला है। दरोगा की नाक थोड़ी देर गूँ गूँ करने के बाद बजने लगती है। वे औंधे लेटे हुए हैं। जमींदार की टहल एक टहलुवा कर रहा है। वे भी लगभग वैसे ही लेटे हैं। उन के हाथ पैर टहलुवा दाब रहा है।]

जमींदार—(लेटे हुए) सो गये दरोगा साब ?

दरोगा—(नाक बजती है।)

जमींदार—सो गये रे दरोगा बाबू ?

बापू—हाँ महाराज !

जमींदार—(शराब के हल्के नशे में) ये तो पूरा बकरा माँग रहा था और चार बोतल ! मैंने कहा बापू हमारा ही आदमी है कुछ तो ख़याल रखो।

बापू—हाँ मालिक ?

जमींदार—ले जाना तू ये बोतल, धो के पी लेना साले ! तेरे बाप ने कभी नहीं पी होगी...मगर ये हिम्मतसिंह का बच्चा भी मुर्गा खाने में एक नम्बर का उस्ताद है।...तू खर्चे की चिन्ता मत कर बापू ! तेरी इस सेवा से... दरोगा अब...कुछ नहीं करेगा।...तेरी छोती बड़ी समझदार है !

बापू—हाँ मालिक !

जमींदार—जा रे...राम किसनवा...तू जा...और बापू......

(राम किसन टहलुवा जाता है...बापू जाने को होता है।)

जमींदार—(बापू को रोक कर) तू फिकिर मत करना, समझे, हवेली में कह दिया है कि छीती जो माँगे दे देना उसे। तुझे जो चाहिए, घर समझ कर माँग लेना, समझे...जा अब !

(बापू जाता है।)

[थोड़ी देर में छीती दूध का कटोरा लिये चिक के अन्दर से प्रवेश करती है।]

छीती—(जमींदार को सोता समझ कर) मालिक !

जमींदार—(बनावटी नेश में)...कौन ? छोटी रानी ! आओ मेरे पास।

छीती—(डरते हुए) मालिक। मैं तो...छीती......

जमींदार—(जैसे होश में आता है।) ओ ? तू तो छीती है...क्या दूध लायी ...ला...(कटोरा मुँह से लगा एक ही घूँट में पी जाता है और कटोरा देते हुए) ले...

(छीती जाने को होती है।)

जमींदार—अरी सुन, जरा पाँव दबा दे तो। इस रामकिसनवा साले को तो कुछ नहीं आता। (छीती एक बार झिझकती है, दरोगा को देखती है।) अरे वो तो भैंसे जैसा सो रहा है।

[छीतो औंधे लेटे हुए जमींदार की पाँव दबाने लगती है। कुछ क्षण बाद उसकी पीठ दाबती है।]

जमींदार—भगवान भी बड़ा अजीब है छीती !

छीती—हाँ मालिक।

जमींदार—(अधलेटा हो कर उसके गाल पर चपत जमाते हुए) हाँ मालिक क्या ? कुछ समझती भी है मूरख ! कि झुठे हाँ भर दी ! ले जरा सिर दाब दे।

(छीती सिर दाबती है।)

जमींदार—तेरी तीन मालकिनें हैं, पर खड़ा कर दूँ उन में तो वे पानी भरें। छीती ! तू तो बस परीजादी है, परीजादी !

(और उसके गालों में चुटकी भरता है।)

छीती—(गाल छुड़ाते हुए) छोड़िए मालिक ! ये बातें ठीक नहीं लगतीं।

जमींदार—(हँसते हुए) क्यों री सरमा गयी ? अरी हम से क्या सरम ? जानती है दरोगा कह रहा था छीती तो बस कटार है।

छीती—(उठते हुए) फिजूल की गंदी बातें छोड़िए मालिक ! छोटों के साथ ठिठोली करने से बिगड़ जाते हैं।

[जमींदार उसके हाथ को ऐसा झटका देता है कि वह उसके सीने पर ही गिर पड़ती है। उसे दोनों हाथों से पकड़ कर बाँह में भर लेता है।]

छीती—(अपने को छुड़ाते हुए) छोड़िए यह क्या करते हैं मालिक ! आपकी हाँसी और हमारी फाँसी हो जायेगी मालिक ! हमें यह सब नहीं सुहाता।

जमींदार—(वैसे ही पकड़े उसे चूमने के लिए उद्यत होते हुए) अरी सुन तो. लेकिन मैंने दरोगा को वो फटकारा कि छठी का दूध याद आ गया होगा। खबरदार ! जो परजा की बेन-बेटी पर हाथ उठाया तो......

छीती—(वैसे ही) जाने दें मालिक ! मैं भी तो आपकी बेन-बेटी हूँ।

जमींदार—(छीती को बराबर छुड़ाते हुए देख कर) देख छीती ! ज्यादा गड़बड़ हमें पसन्द नहीं। सीधी तरह से मान जा, राज करेगी !

छीती—(कुछ तन कर) ऐसा पाप कर के आपको क्या मिलेगा ? हमारी गरीबी का......

जमींदार—(उसे कस कर पकड़ता है, वह छुड़ाती है—छीना-झपटी के साथ) देख, मान जा, नहीं तो खोद के गाड़ दूँगा। हम तो समझा रहे हैं हरामजादी को...और तू है कि......

(उसे और भी कस कर पकड़ता है।)

जमींदार—अच्छा तो बड़ी सती साबितरी बन रही है हम से ही...बच के चली...।

[तभी छीती छुड़ा कर भाग जाने को होती है कि विद्युत्-वेग से दरोगा उठता है और छीती को पीछे से पकड़ता है। उस छीना-झपटी में लेम्प गिर पड़ती है और बुझ जाती है। छीती बड़ी ज़ोरों से चीखती है।]

जमींदार—(अँधेरे में से) मार डालूँगा यदि चीखी तो......

(पटाक्षेप)

चतुर्थ दृश्य

[स्थान वही जमींदार का सहन। प्रदोष बेला। पृष्टभूमि में दूर कहीं अज़ान का स्वर सुनायी पड़ता है। जमींदार और दरोगा सो रहे हैं। लेम्प टूटी पड़ी है। भोर का मिश्रित अँधेरा। कुछ अलसाया सा वातावरण]

सुभान—(पृष्ठभूमि में साँकल बजाते हुए) मालिक ! सरकार !

दरोगा—(करवट बदलते हुए) कमबख़्त सोना हराम है।

सुभान—(उसी रीते) दरोगा साब ! दरोगा साब !

दरोगा—(बिस्तरे पर बैठ कर जमुहाई लेते हुए) रात उस हरामजादी के कारण नींद नहीं आयी और सुबह-सुबह ये कारिन्दे साले...कैसा ख़ूबसूरत सपना था...दोनों छातियाँ......

(सुभन पृष्ठभूमि में आवाज़ें दे ही रहा है।)

जमींदार—(औंधे लेटे, चिढ़ते हुए) कौन कमीना सवेरे-सवेरे चीख़ रहा है ?
दरोगा—क्या जाने क्या मुसीबत इस साले पर सवेरे-सवेरे आयी है।

[उठ कर दरोगा दरवाज़ा खोलते हुए बाहर जाते हैं। तभी थोड़ी ही देर बाद सुभान हाँफता हुआ आता है।]

सुभान—मालिक ! मालिक !
जमींदार—(रोष से) क्या है, सवेरे-सवेरे क्या आफ़त मचा रखी है ?
सुभान—(डरा-डरा-सा) हुज़ूर, वो, वो......
जमींदार—(डपटते हुए) गुन्नाता क्यों है ? क्या बात है ?
सुभान—वो...वो...छीती......
जमींदार—(कुछ चिन्तित से) क्या हुआ उसे ?
सुभान—उसने चौधरन की बावड़ी में...कूद कर......
दरोगा और जमींदार—क्या मर गयी ?
जमींदार—(एकदम चेहरा पीला पड़ जाता है।) झूठा कहीं का !
सुभान—नहीं हुजूर। मैं वहीं बगीची में था। मैंने खुद उसे देखा।
जमींदार—तू अभी बाहर जा।

(वह जाता है।)

जमींदार—(घबराते हुए) तो अब क्या किया जाये ?
दरोगा—(निश्चित भाव से) क्या पचड़े में पड़े हैं आप भी सुबह-सुबह।
जमींदार—क्या मज़ाक करते हैं आप भी, अभी तो बात हम लोगों के हाथ में है।
दरोगा—देखिए जनाब ! मजा लूटा होगा आपने, आप जानें।
जमींदार—नहीं जनाब। मामले की रफ़ा-दफ़ा तो होनी ही चाहिए।

दरोगा—अच्छा ! तो फिर घबराने की क्या बात है ? बापू कहाँ है ? उसे पकड़ बुलाओ साले को ! अभी हुआ जाता है सब । हीरा से लाश मँगवा लो ।... लेकिन...जमींदार साब......

(रुपये का संकेत उसी तर्जन अँगूठे के ढंग पर)

जमींदार—आप को रुपये की पड़ी है दरोगा साब ! मुफ़्त ही में लेने के देने पड़ गये ।

दरोगा—जो भी हो जनाब ! खुदकुशी आप के गाँव में हुई है, मामला संगीन है ।

जमींदार—(आवाज़ के ढंग पर) सुभान ?......

सुभान—(आते हुए) जी !

दरोगा—(रोब से) जाओ जी एक आदमी बापू को पकड़ लाये, फिर दस पाँच लोगों को फ़ौरन बुला लाये और दूसरा जा कर लाश लाने का प्रबन्ध करे जाओ जल्दी !

(सुभान जाता है ।)

दरोगा—जमींदार साब ! यह तो तभी होगा जब बात पक्की हो जाये !

जमींदार—अरे हिम्मतसिंह जी ! हम आप से कोई बाहर हैं ?

दरोगा—यह ठीक है जमींदार साब ! व्यवहार, व्यवहार है । तय हो जाना चाहिए नहीं तो फिर पीछे......

जमींदार—तो अब आप ही बताइए ।

दरोगा—जमींदार साब ! सच बात तो यह है कि मामला तो पाँच हजार का है ।

जमींदार—अब देखिए, न ज़्यादा गहरे में उतरें न उतारें ।

दरोगा—तो फिर बाद में न कहिएगा ।

जमींदार—आखिर पुलिस वाले किसी के नहीं होते ।

दरोगा—(व्यंग्य से) अरे जनाब ! जिस के नौकर हैं, जब उसी सरकार के नहीं तो फिर अपने-तुपने का सवाल ही क्या ?

जमींदार—मगर दरोगा साब ! इतना तो हम देहातियों के पास कभी भी नहीं हो सकता।

दरोगा—अरे जनाब ! देहातियों के पास ही तो होता है। उन्हीं से तो करोड़ों राजा रईस हैं। खैर छोड़िए, आप बताइए, हमारी मेहनत का क्या देंगे ? हमने तो सारा खर्च कहा था।

जमींदार—अब आपने तो इतना मुँह फाड़ा है कि सारी धरती ही समा जाये। कुल एक हजार में रफ़ा-दफ़ा हो जाना चाहिए।

दरोगा—वाह जनाब ! ये कोई दीवानी मामला है ? फ़ौजदारी है फ़ौजदारी। जो भी फँसेगा सीधा फाँसी नहीं तो काले पानी जरूर ही जायेगा। सोच लें अब आप !

जमींदार—अब दरोगा जी, दोस्ती में कुछ तो लिहाज़ कीजिए।

दरोगा—अच्छा तो फिर सवेरे-सवेरे भगवान झूठ न बोलाये...दो हजार की तय रही !

जमींदार—मगर दरोगा साब !

दरोगा—बस जमींदार साब ! दोस्ती की बात आप बीच में ले आये, नहीं तो... और फिर जमींदार साब ! समझ लीजिए छोरी की ख़ातिर ही सही...रात भर लिये पड़े रहे और...क्या इतना भी......(**ही-ही...विकृत हँसी, हँसता है।**) और हाँ दो-चार जेवर भी तो अदालत भेजने होंगे आपको।

[**तभी सुभान बापू को पकड़ कर लाता है। पीछे-पीछे घबराया हुआ एमन भी आता है। उसके आते ही :**]

दरोगा—(**एकदम दहाड़ते हुए**) तो आप भागे जा रहे थे ? क्यों बे साले ?

बापू—(**कुछ न समझते हुए**) क्या मालिक ?

दरोगा—(**एकदम उठ कर दो चाँटे मारते हुए**) साले ! पूछता है, क्या मालिक ? बीवी को धक्का दे दिया क्यों एँ ? बता जेवर कहाँ हैं ?

बापू—(**अत्यन्त भय मिश्रित आश्चर्य के साथ**) क्या साब !

दरोगा—लगाऊँ अभी दो और ? चोरी और कतल ! जाना साले अब काले पानी। बाँध दो सुभान, साले को खम्भे से। जमींदार साब ने कल ही बचाया हरामजादे को और उन्हीं के घर चोरी !

बापू—(**सुभान उसे पकड़ कर बाँधता है खम्भे से**) नहीं मालिक ! हम निरदोस हैं। हमरी छीती का हम नहीं मारे सरकार !

(**और रो देता है।**)

एमन—(**खम्भे से बँधे अपने पिता बापू से लिपटते हुए**) बापू ! माँ क्या हुई बापू ? ये तुम्हें क्यों मार रहे हैं ?

(**रो देता है।**)

दरोगा—तुझे भी बड़े घर की हवा खानी है साले ? भाग यहाँ से। (**सुभान से**) छीती की लाश ले कर हीरासिंह अभी नहीं आया सुभान ! पंचनामा करवाने का बन्दोबस्त हुआ ?

सुभान—हाँ साब ! जल्दी हो जाता है।

जमींदार—हाँ अभी हुआ जाता है जनाब !

बापू—(**एकदम वस्तुस्थिति की गम्भीरता को समझने पर दहाड़ें मार कर रोते हुए**) उजड़ जाऊँगा मालिक ! भगवान की सौंगंध, हमने छीती को नहीं मारा। वह तो रात हवेली में सोयी थी। हम निरदोस हैं दरोगा बाबू ! खाक हो जाऊँगा। न्याय करें हुजूर !

दरोगा—अबे साले बीवी से जेवर चोरी करवा के उसे बावड़ी में धकेल दिया, न पकड़ाई में आता तो ऐश करता और अब पकड़ा गया तो बड़े घर की हवा खा। साले हमारी जान काहे खा रहा है ?

[**तब तक गाँव के पाँच सात लोग प्रवेश करते हैं। सब के मुखों पर हवाइयाँ उड़ रही हैं। हीरासिंह कुछ लोगों के साथ छीती की लाश लिवा लाता है। लोग आँगन में चारों ओर खड़े हो गये हैं। गीले**

कपड़ों में लाश लिपटी हुई रख दी गयी है। और एक सफ़ेद कपड़ा डाल दिया गया है। बापू खम्भे से बँधा सिसक रहा है। एमन अपने पिता से चिपका पड़ रहा है। लाश को देखते ही बापू रस्सी तुड़ा कर जैसे छीती से लिपटने के लिए टूट पड़ने की कोशिश करता है। एमन तभी सहसा अपनी माँ से लिपट जाता है।]

एमन—माँ ! माँ !

दरोगा—(एकदम गरज कर) नाटक बन्द कर बे लौंडे ! हटा दो लौंडे को वहाँ से। (फिर पंचों की ओर देख कर) हाँ जी, आप लोग सुन लें इस पंचनामे को। इस में यही लिखा है कि इस लाश के पंचनामे से यही साबित होता है कि सुभान कारिन्दे ने बापू किसान को अपनी बीवी छीती से चौधरन की बावड़ी के पास सवेरे-सवेरे छीना-झपटी करते पाया। सुभान पास ही जमींदार की बगीची में पहरे पर था। छीती कुछ जेवर जमींदार के घर से चुरा लायी थी। छीती और बापू किसान अपने लड़के के साथ एक शाम पहले ही हवेली में रहने गये थे। वह छीना झपटी जेवरों के लिए थी। बापू ने अपनी बीवी को बावड़ी में धक्का दिया, जिस के सबब से वह मर गयी। हाँ जी, जिस किसी को शक को वह कपड़ा उतार कर देख ले कि लाश छीती की है या नहीं ?

बापू—नहीं, बिलकुल झूठ है। अन्याय है यह ! मैं तो एमन के साथ गौशाला में सो रहा था। छीती तो रात हवेली में ही सोयी थी। मुझे बिलकुल पता नहीं। यह झूठ है। गरीब को क्यों उजाड़ते हो दरोगा साब !

(रोने लगता है।)

दरोगा—अरे अदालत के सामने सब झूठ-सच मालूम हो जायेगा। इस का फ़ैसला तो वही करेगी। हाँ, आप लोग अँगूठे की निशानी लगाते जाइए (धीरे से डपटते हुए) सरकारी काम में देर करते हैं आप ?

सब—नहीं सरकार, देर काहे की ?

दरोगा—जमींदार साब ! हमारा घोड़ा तैयार करवा दें। लाश अब फुंकवा दें, पंचनामा हो गया। कारिन्दे साथ कर दें। कातिल को ही ले जाऊँगा। थाने जल्द पहुँचना होगा।

(लोग निशान लगा रहे हैं। बापू रो रहा है। लाश पड़ी है।)

(पटाक्षेप)

पंचम दृश्य

[गाँव में अकाल पड़ रहा है। लोगों के मुख भूख के मारे विकृत हो गये हैं। खेत फट गये हैं। नदियाँ सूख गयी हैं। भूख के कारण लोग भुनगों की भाँति मर रहे हैं, साथ ही पशु भी।

जमींदार की हवेली का वही आँगन। कुछ समय उपरान्त का यह दृश्य है। चीर हरण वाला तथा दरबार वाला चित्र यथावत् हैं। सवेरे के दस बज रहे हैं। जमींदार बढ़िया मलमली कुरता, नाखूनी धोती, पट्टे निकले हुए। गले में सोने की चेन, अँगुलियों में अँगूठियाँ हैं। बढ़िया पम्प शू तखत से सटा नीचे रखा है। कुर्ते के अन्दर की जालीदार बनियान झलक रही है। पान चबाते गाव तकिया से बैठे हैं। कुत्ते के सँग कुत्ते की दुम की भाति उनके दीवान जी—इटालियन गोल टोपी, चश्मा, बन्द गले का कोट, धोती पहने बैठे हैं। सामने के डेस्क पर झुके कुछ लिख रहे हैं। कई किसान फटे कपड़ों में डरे-सहमे-से अनाज की भीख एवं उधारी माँगने एकत्रै हुए हैं। तभी टलहुवा हुक्के में आग भर कर लाता है। दो एक बार हुका गुड़गुड़ाने के बाद :]

जमींदार—अरे हम सारा कोठार लुटा दें तो हम क्या खाँयगे !

दीवान जी—बिलकुल ठीक अन्नदाता ! लेकिन सरकार, गाँव वालों के तो आप ही भगवान हैं।

कुछ किसान—हाँ दीवान जी ! राजा ही तो परमेसुर का अवतार होता है।

जमींदार—अरे हम जानते हैं। गरज पड़ी है तो हाथ जोड़ते आये हो। बापू के मुकदमे में यही तो...मटरू है जो मुकर गया कोर्ट में कि नहीं मालूम। वह हमें सानना चाहता था, तब तुम कहाँ गये थे ! अब कैसे गाय जैसे खड़े हैं, बदमास कहीं के ! छीती हमारे यहाँ सोयी थी ? किसी की बहू-बेटी हमारे यहाँ क्यों सोने लगी ? हमारी इज्जत पर हमला होता रहा और तुम लोग......

वृद्ध रामदीन—अरे सरकार ! अब छमा करें। जूते और कुत्ते पर भी कोई क्रोध करता है ?

('हें हें' हँसता है।)

जमींदार—देखो रामदीन, तुम बूढ़े आदमी हो, हम इन छोटे लोगों के मुँह नहीं लगते। भगवान सब देखता है। दूध का दूध और पानी का पानी। जैसा बापू ने किया वैसा उसे भुगतना पड़ा। वह काला पानी गया और हमें ही दोषी ठहराते इन की जीभ नहीं गिरती !

(और भीड़ को गुस्से से घूरने लगते हैं।)

रामदीन—अब मालिक ! छोटे न हों तो बड़ों की पहचान कैसे हो ? रहीम जी ने कहा है कि सरकार ! 'छमा बड़न की चाहिए छोटन कूँ अपराध !'

जमींदार—अच्छा-अच्छा यह बताइए कि कितना अनाज चाहिए ?

एक किसान—(**जो जवान है तथा जिसके कपड़ों से हलका शहरातीपन झलकता है**) गाँव के दूसरे कूँएँ सूख गये हैं। इसलिए आपका कुँआ पब्लिक के वास्ते खोल दिया जाना चाहिए।

जमींदार—(**एक दम लाल-पीले हो कर**) क्या कहा बे ? पब्लिक ! यह हरफ़ कहाँ से सीखा है ? थोड़े दिन सहर की हवा खाकर आया है, इसीलिए ? साले जीभ खिंचवा लूँगा, ठाकुर जोरावर सिंह जमींदार का गुस्सा साले, देखा नहीं अभी ! कल से कहेगा हवेली भी पब्लिक के लिए खाली कर दूँ । मारे जूतों के सिर तोड़ दूँगा समझे ? जाओ यहाँ से कुछ नहीं मिलने का किसी को ।

रामदीन—अरे हरखू ! धोती पहरने का तो सहूर नहीं और चला दरबार में । किस के सामने क्या बोलना......जानता है ? तेरे बाप की हस्ती गाँव में क्या थी, नहीं जानता ? अरे जब नहीं जानता तो चुप क्यों नहीं रहता ? माँ बाप क्या अपने बच्चों को भूखा-प्यासा देख सकते हैं ? पर रीत-रीत की बात है । चले हैं भीख माँगने और ठसक लम्बरदार की-सी ! वाहरे पगले, छमा करें सरकार ! परजा से ही तो भूल होगी ।

जमींदार—सुनो रामदीन ! हमारे पास भी कोई कुबेर का धन नहीं गड़ा है । आदमी परोपकार करे, लेकिन ऊँच-नीच देख कर ही करे, समझे ! अब गाँव वालों पर ही तो मोह होगा । अब पहले का जमाना थोड़े ही रहा । आजकल के लौंडे जाने क्या-क्या सीख आते हैं । क्यों रामदीन ! पूरे गाँव में एक सम्य था, प्रेम था ।

रामदीन—अब भला सरकार ! पहले की खूब चलायी आपने । माँ-जने में और गाँव-जने में कोई फरक नहीं होता था । महाभारत में एक किस्सा आता है धर्मावतार......

दीवान जी—(**डपटते हुए**) सरकार की सुनोगे नहीं और जब देखो बीच में आधी रोटी पर दाल लेने खड़े हो गये । बड़ी बुरी आदतें हैं तुम्हारी रामदीन !

(रामदीन सहम जाता है ।)

जमींदार—हमें देने में कोई उजर नहीं, पर सब पर पिछला बकाया इतना है कि बिना उसकी सफाई के तो मुश्किल है।

कुछ किसान—अब सरकार, यों न मारो—दो पाटों में बेमौत मर जायेंगे, मालिक !

जमींदार—तो सब सुन लो कि फी आदमी सेर भर जुआर दी जायेगी।

सब—बस ? एक सेर से क्या होगा सरकार ?

दीवान जी—चुप करो सब !

जमींदार—और वह भी इसी शर्त पर कि अगली फसल पर दस दस सेर की वापसी। और तब तक बन्धक में घर या खेत या जेवर आदि तो रखना ही होगा, क्यों दीवान जी ?

दीवान जी—हाँ हुजूर ! बिना बन्धक के उधार देना, सरकार तक ने मना किया है।

(लोगों की बातों का अस्पष्ट स्वर वातावरण में गूँज जाता है।)

रामदीन—धर्मावतार ! जरा सोचें कि पानी का कहीं पता नहीं। सब नखेतर (**नक्षत्र**) सूखे जा रहे हैं। खेतों ने आँखें फाड़ दीं महाराज। कब बुआई होगी और क्या होगा ? ढोर-डंगर सब मिट्टी हो गये सरकार ! यों न करें, कुछ तो दया करें !

दीवान जी—(**रोब से**) तो मालिक क्या करें ? गैर-कानूनी काम करें तो कल से सरकार को जवाब कौन देगा ? तुम ? हम अपना सब बिना बन्धक के लुटा दें ? मालिक तुम लोगों को न जानते हों सो भी नहीं। बहुत कुछ सोच कर ही कहा है। अरे तुम लोगों को मालूम है कि पड़ौस के जमींदार सैयद साब ने किन शर्तों पर अन्न दिया है ?

जमींदार—जाने दीजिए दीवान जी, हम ने आसान शर्तें रखीं तो किसी पर अहसान नहीं किया। परजा का दुख अपना दुख। इनकी मर्जी, जिसे चाहिए ले जाये। अरे ये हमें देंगे तो हम कोई गठ्ठर बाँध कर भगवान

के घर तो ले नहीं जायेंगे—पर है, अपनी-अपनी समझ जो ठहरी ! किसी पर कोई दबाव नहीं। कल हम पर आफत आये तो हम किस की मुँह ताकेंगे ?

रामदीन—मालिक ! राजा तो गंगा है, वह भला क्यों सूखे ? खैर आपका भी कहना ठीक है, बन्धक तो चाहिए !

[तभी भीड़ में खड़ा एमन, जो अब तक बिलकुल चुप उदास खड़ा था, भीड़ चीरता हुआ निकलता है। उसके कपड़े लत्ते खो गये हैं, । वह बहुत क्रोध में है।]

एमन—मेरा तो घर, माँ, बाप सभी आपने ले लिये, हम क्या खायँगे जमींदार साब ?

जमींदार—एक दम आपे से बाहर होते हुए) इस कमीने को यहाँ किसने आने दिया ? निकालो इसे !

(तभी सुभान और होरासिंह लपक कर उसे बाँहों से पकड़ घसीटते हैं।)

एमन—भूखे मार डालना चाहते हो ? सब हड़प गये और अब भीख भी देना नहीं चाहते ?

जमींदार—(**चीख कर**) लगाओ पाँच जूते साले के, निकाल दो काला मुँह कर के गाँव से।

एमन—.खुद चला जाऊँगा जमींदार साब ! पर सुन लें ये गाँव वाले, मेरी माँ का हत्यारा यह है !

(और जमींदार की ओर हाथ से संकेत करता है। सब सन्न रह जाते हैं।)

जमींदार—(**एकदम मसनद से लपकते और चार चाँटे रसीद करते हुए**) बोल साले मैं खूनी हूँ ?

एमन—हाँ, हाँ, तू ख़ूनी, हत्यारा और पापी...थू!

[बड़े ज़ोर से उस के मुँह पर थूकता है। सुभान और हीरासिंह उसे मारते हुए बाहर निकालते हैं।]

(पहले अंक पर पर्दा गिरता है।)

द्वितीय अंक

सूत्र दृश्य २

[मंच पर वही गहरा अंधकार हो जाता है। जेल का प्राथमिक दृश्य सम्मुख आता है। जेल के कांस्य घंटे में एक बजता है। पुलिस की सीटियाँ तथा वातावरण शेषानुसार]

संतरी—(दूर से डाक रूपे) गार्ड ! सात नम्बर सेल ! ताला बेड़ी आलरेट ?

गार्ड—(उसी रीते) सात नम्बर सेल ! ताला बेड़ी आलरेट !

संतरी—(अधिक दूरी पर, डाक रूपे) गार्ड ! बार नम्बर सेल ताला आलरेट ?

[पृष्ठभूमि में यह प्रतिसतर्कता डूब जाती है। गार्ड लखन दाहिने से प्रवेश करता है। वह अपने बरानकोट का कालर कानों तक ऊँचा चढ़ाये है। टोपी और कालर के बीच से उस के मुँह का बहुत कम भाग, जैसे नाक, मूँछ तथा सतर्क आँखें दिखते हैं। उस के हाथों में जेल की भद्दी मोटी लालटेन है, जिसे वह ख़ास ढंग से झुलाते हुए चलता है। एमन की पीठ गार्ड की ओर है, क्योंकि एमन मंच की ओर मुँह कर के खड़ा है। लखन लालटेन से कोठरी में रोशनी फेंकता है।]

लखन—इत्ती रात गये भी सोये नहीं आप ?

[वह लालटेन ऊँची किये हुए है। गार्ड की उपस्थिति सदा सींखचों के पार से ही होती है।]

एमन—(गार्ड की ओर घूम कर) हम दोनों ही पहरेदार हैं लखन !

(हँस देता है।)

लखन—(इस बीच लखन बीड़ी सुलगाने लगता है।) बड़े आदमियों की बात भी बड़ी होती है साब ! लेकिन बाबू जी ! ऐसे कब तक खड़े रहिएगा ? अब कोई नहीं आयेगा।

एमन—किसी आने वाले की प्रतीक्षा नहीं है लखन ! जो जा चुका तथा जो जा रहा है, उसी को देख रहा हूँ। सोना तो है ही लखन ! जागरण कब मिलेगा ? भोर शेष चार स्वर और...(एक दम सहज हो कर) तुम्हारी भाँति तुम्हारा यह बरानकोट भी बुड्ढा हो गया लखन !

लखन—अरे बाबू जी ? हम्पटन सार्जेंएट को जानते हैं न ? बड़ा कमीना है बाबू जी, जेल के सभी संतरियों के लिए नये कोट आये थे, लेकिन भगवान जाने कहाँ गये। अपने भाग में तो पुराना ही लिखा है साब !

एमन—तुम्हारे ही भाग में नहीं लखन ! संसार पर सभी लोग पुरानापन लादते रहे हैं।

लखन—(न समझ कर चौंकते हुए) क्या कहा साब ?

एमन—कुछ नहीं, जाओ भाई अपना काम करो !

(लखन का निवेष, हक्की बूट-टापें भी डूब जाती हैं।)

एमन—(सीखचों पर सिर टिका कर मंच की ओर मुँह किये हुए) आज जैसे पथ समाप्त लगता है, क्या उस दिन गाँव से निकाल दिये जाने पर नहीं लगा था ? लगा था, किन्तु पंडित सत्यकाम वेदव्रत जी ने जीवन दिया, सचमुच

एक युग बीत गया। वे आर्यसमाजी काँग्रेसी, निष्ठावान व्यक्ति थे। उस वातावरण ने मुझे अध्ययन की रुचि दी और फिर तो वहीं अध्यापक भी बन गया।

[मंच पर सहसा अंधकार होता है। पन्द्रह बीस वर्षों का अन्तराल प्रकाश एवं संगीत से दिखाया जायेगा]

प्रथम दृश्य

[पंडित सत्यकाम वेदव्रत जी की बैठक। समय सायंकाल। पंडित जी आर्यसमाजी प्रचारक, कांग्रेस-नेता एवं वैद्य भी हैं। बैठक में छोटा-सा साइन बोर्ड लगा है—

आर्य आयुर्वेद राष्ट्रीय आश्रम

कविराज पंडित सत्यकाम वेदव्रत भिषगाचार्य

पंडित जी मँझोले कद के व्यक्ति हैं। रंग गेहुआँ, खल्वाट, व्यक्तित्व प्रभावशाली। आर्यसमाजी होते हुए भी सनातनी चंदन का गोल तिलक लगाये हुए हैं। खूँटी पर दाहिने उन का श्वेत साफ़ा, श्वेत उपवस्त्र एवं श्वेत कुरता खद्दर का टँगा हुआ है। खूँटी वाली खड़ाऊँ भी रखी हैं। कमरे में बाचोंबीच दरवाज़ा है जिस के ऊपर—'कृण्वन्तोविश्वम् आर्यम्' एवं ! 'स्वतंत्रता हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है'—आदि सुभाषित लिखे हुए हैं। इन सुभाषितों के ऊपर तीन चित्र हैं। सब से ऊपर अकेला चित्र है स्वामी दयानन्द सरस्वती का, जिस के नीचे एक ओर, लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक तथा दूसरी ओर स्वामी रामकृष्ण परमहंस का चित्र है। दरवाज़े के एक ओर आयुर्वेद तथा आर्य समाजी वेदों की प्रतियाँ, वैद्यक ग्रन्थ आदि हैं तो उस के पास की आलमारी में

खादी के थान हैं। बैठक, औषधालय भी है साथ ही खादी भंडार भी है। खादी के थानों वाली आलमारी पर एक फ्रेम में मढ़ा हुआ गाँधी जी का 'यरवदा जेल में चरखा कातते हुए' चित्र रखा है। दीवार में साफ़े के पास 'ॐ जय जगदीश हरे,' प्रार्थना का चार्ट झूल रहा है तो दीवार पर पास ही गायत्री मंत्र सुन्दर अक्षरों से लिखा हुआ है। इन सब में प्रमुख है किरण-मंडल-युक्त—ॐ

बैठक, काँग्रेस का दफ़्तर भी है साथ ही आर्यसमाजियों का मंदिर भी। बैठक में गद्दों का प्रयोग है। पंडित जी की सीट के सामने छोटी डेस्क, गाव तकिया प्रमुख हैं। पंडित जी इस समय बैठ कर यरवदा चरखे पर सूत कात रहे हैं। बाल खिचड़ी हो चले हैं। एमन पास ही बैठा है। वह खादी की धोती तथा कुरता पहने है। कुछ बढ़े हुए से बाल हैं। अत्यन्त प्रभावशाली व्यक्तित्व का २८-३० वर्ष का नवयुवक हो गया है। वह अपने स्कूल 'शिक्षा मंदिर' के उद्‌घाटन के लिए पंडित जी से निवेदन करने आया है।]

पंडित जी—(चरखा कातते हुए) तुम ने एमन ! अपने स्कूल का नाम 'शिक्षा मंदिर' ठीक नहीं रखा। कुछ रखते 'राष्ट्रीय आर्य शिक्षा मंदिर' या 'तिलक राष्ट्रीय शाला'......

एमन—आप ठीक कहते हैं पंडित जी ! किन्तु अभी राष्ट्र का तो पता नहीं।

पंडित जी—क्यों ? भारतवर्ष तो अत्यन्त प्राचीन काल से राष्ट्र रहा है।

एमन—मेरा मतलब यह नहीं था। राष्ट्र की व्याख्या आज के युग में अभी तो की जाती है।

पंडित जी—देखो एमन ! तुम मेरे पुत्र-तुल्य हो।

एमन—आप न होते तो क्या मैं कुछ भी कर सकता था ?

पंडित जी—(हाथ की पूनी समाप्त करते हैं और चरखा एक तरफ़ रखते हुए) क्यों नहीं भाई ! अब तुम वो एमन थोड़े ही रहे जो दस-पन्द्रह बरस पहले

थे। और तुम में इतना विनय है, यह प्रसन्नता की बात है एमन! व्यक्ति स्वयं अर्जन करता है, अन्य तो निमित्त-मात्र होते हैं। देख लो न, लड़ रहा है पूरा देश, पर तिलक और गांधी जैसे नेता निमित्त हैं।

एमन—निमित्त बनना भी खेल नहीं पंडित जी! आप मेरे पूज्य हैं और क्या कहूँ?

पंडित जी—एक बात पूछना चाह रहा था कि लोगों का कहना है, तुम्हारा सम्बन्ध (धीरे से) क्रांतिकारियों से है!

एमन—किस ने कहा आप से?

पंडित जी—ऐसी बातें कोई किसी से कहता है? पुलिस को तो यह शक है कि तुम्हारा 'शिक्षा मंदिर' क्रांतिकारियों का अड्डा होने वाला है तथा जो अध्यापक तुम बुला रहे हो, वे सब क्रांतिकारी होंगे, वहाँ पिस्तौल चलाना, डाके डालना सिखाया जायेगा।

एमन—(बड़े ज़ोरों से हँसते हुए) वाह, लोग इतना हमारे बारे में जानते हैं? खूब!

पंडित जी—एमन! जैसा कि तुम चाहते हो, उद्घाटन मैं करूँ तो यह जानना आवश्यक ही है कि सत्य क्या है?

एमन—तो आप भी पुलिस के कथन को सत्य मानेंगे?

पंडित जी—तो तुम बताओ न क्या बात है? क्योंकि यह तो सिद्धान्त की बात है। हिंसा से हमारा कोई सम्बन्ध नहीं।

एमन—मान लीजिए कि मेरा सम्बन्ध यदि क्रांतिकारियों से आज नहीं, कल हो जाय तो क्या यह सम्बन्ध इतना बुरा है कि आप जैसे देश-भक्त भी उसे बुरा मानें? क्या वे देशभक्त नहीं?

पंडित जी—हैं एमन, पर ये हिंसावादी हैं। गाँधी जी हिंसा में विश्वास नहीं करते।

एमन—(गम्भीर हो कर) गाँधी जी या आप कोई बात कहें, जिसे मैं आँख मूँद

स्वीकार लूँ तो वह अनुकरण होगा, आचरण नहीं। अनुकरण अंधा होता है, जब कि आचरण विवेक की वस्तु है। बड़े से बड़ा अनुकरण भी छोटे से छोटे आचरण के सम्मुख निकृष्ट है। और गाँधी जी कहते हैं इसीलिए कोई सत्य या अन्तिम बात है, यह मुझे स्वीकार्य नहीं।

पंडित जी—आज मुझे गर्व भी है तुम पर और खेद भी। गर्व इसलिए कि एक साधारण देहाती बालक से उठ कर तुम एक विवेकवान युवक बने। तुम में साहित्य की, राजनीति की चमक है, बुद्धि है। तुम्हारी शक्ति शायद किसी दिन कोई बड़ी बात करा दे तुम से! किन्तु दुःख इसलिए कि हमारे आश्रम का वातावरण भी तुम्हारे मन के मूल-बद्ध द्वेष-भावों को दूर न कर सका। जब मैं तुम्हारे हाथों में तकली के स्थान पर पिस्तौल की बात सुनता हूँ, तब मुझे देश का भविष्य अंधकारमय लगता है।

एमन—भक्ति के कई मार्ग हैं पंडित जी!

पंडित जी—यह तुम्हारा मार्ग, क्रांतिकारियों का मार्ग, अशुद्ध है।

एमन—तो आपका आग्रह साधन पर ही है।

पंडित जी—साधन भी तो महत्त्वपूर्ण होता है। साधन की अपवित्रता, साध्य को भी भ्रष्ट कर देती है। देश-सेवा हमारे लिए हवन की भाँति पवित्र है। भारत हमारे लिए माँ है! तुम इसे करोड़ों, नदियों और मिट्टी का 'देश' भर समझते होगे।

एमन—माँ तो हमारे लिए भी है, किन्तु चण्डी-रूपा है।

पंडित जी—तर्क न करो एमन! मैं तो माँ का भक्त ठहरा भाई!

एमन—जो भी हो पंडित जी! किन्तु मैं एक बात भविष्य के गर्भ में देख रहा हूँ कि आप हमारे उन्मूलन के लिए आग्रह करेंगे, भले ही उसे 'सत्याग्रह' कहें। किन्तु हम कभी आपके मार्ग की अपात्रता सिद्ध करने के लिए एक भी गोली का प्रयोग नहीं करेंगे। आप में विनयशील अनुदारता है और हम में दर्पमयी उदारता!

पंडित जी—जो भी हो एमन ! मेरा तुम्हारे प्रति पुत्रवत अनुराग है, इसलिए समय रहते चेतावनी दे दी है कि देश-सेवा में होम ही होना चाहते हो तो गाँधी जी के मार्ग का अनुसरण करो, न कि ऐसे चोरी-छिपे अँग्रेजों को मार कर कालापानी पा जाओ ।

एमन—पंडित जी ! हम जिस प्रकार गाँधी जी के मार्ग को बुरा नहीं कहते, क्या आप ऐसा नहीं कर सकते ?

पंडित जी—पर भाई बुरा तो निन्दनीय ही है ।

एमन—इस का निर्णय आप या गाँधी जी कर ने वाले कौन ? और साफ़ बात यह है कि हमारी तथा-कथित हिंसा को अस्वीकार करने में ही तो आपकी स्थिति है—अहिंसा ! और इस अस्वीकारने को आप सत्याग्रह कहेंगे । यही अस्वीकारना आपकी शक्ति है, क्योंकि आपकी अपनी कोई स्वीकारिता नहीं । बुरा न मानें तो एक बात कहूँ पंडित जी ! कि आपका लक्ष्य विजय है और हमारा कर्म है । हो सकता है सफलता आपको ही मिले ।

[तभी पंडित जी सुनते हैं कि बेरिस्टर दास आवाज़ दे रहे हैं, साथ में पंडित जी के अनुज प्रोफ़ेसर प्रफुल्ल बाबू भी हैं ।]

दास बाबू—पंडित जी ! पंडित जी !!

[और बेरिस्टर दास तथा प्रफुल्ल बाबू प्रवेश करते हैं । दास बाबू बंगाली हैं । उन की वेशभूषा है—धोती, कुरता, चदरा, विद्या-सागरी मेधावी व्यक्ति । आयु ४० वर्ष के आसपास । प्रफुल्ल बाबू २५ वर्ष के दुबले-पतले अँग्रेज़ी के प्रोफ़ेसर । खादी की धोती, कुरता तथा गाँधी टोपी लगाये हुए हैं । रंग दोनों का साँवला है ।]

दास बाबू—नोमोश्कार पंडित जी !

पंडित जी—(**उठते हुए**) आइए दास बाबू । (**प्रफुल्ल को देख कर**) बैठो प्रफुल्ल !

(दोनों बैठते हैं ।)

पंडित जी—दास बाबू! आप एमन बाबू को तो जानते हैं न?

दास बाबू—हाँऽऽ नाम सुना-सा है। (**एमन से**) कहिए कैसे हैं?

एमन—आपकी कृपा है। सुना आप गाँधी जी के साथ काम करने के लिए जाने वाले हैं।

प्रफुल्ल—अपनी इतनी रोरिंग प्रेक्टिस छोड़ रहे हैं। देश-सेवा बिना त्याग के सम्भव नहीं।

एमन—लेकिन फिर पूरी फेमिली के मेनटेनेन्स का क्या होगा?

[एमन अपने इस प्रश्न पर स्वयं ही खीज उठता है। तीनों व्यक्ति उस की ओर एक क्षण तो घूरने लगते हैं, फिर दास बाबू ज़ोरों से कहकहा लगाते हैं।]

दास बाबू—अब किशी प्रकार तो करना ही होगा।

(हँसते हैं।)

पंडित जी—तुम्हें यह भी नहीं मालूम। कलकत्ते में ५० मकान हैं दास बाबू के अरे, रहे तुम देहाती हो। इतना बड़ा आदमी न हो तो देश सेवा सम्भव है?

एमन—(**हतप्रभ हो कर**) क्षमा करें दास बाबू! आपके बड़प्पन को किसी प्रकार ठेस लगाना मेरा अभिप्राय नहीं था।

दास बाबू—कोनू बात का चिन्ता नेई। और फिर आप रिव्याल्यूशनरी हो कर चिन्ता कोरेगा?

एमन—मैं और रिवोल्यूशनरी?

प्रफुल्ल—हाँ एमन बाबू। मैं इस बारे में आप से कहना चाहता था। मैंने सोचा घर के आदमी हैं आप। कितनी कठिनाइयों से दोनों टाइम रोटी कमाने के लायक हुए ही हैं अभी। आपको ऐसी बातों में नहीं पड़ना चाहिए। मैंने सोचा, भाई साहब से ही कहूँगा कि वे आपको समझायें।

दास बाबू—लेकिन लगता है, आप क्रांतिकारी हो कर पंडित जी को बहुत मानते हैं। वैसे पंडित जी इस योग्य हैं भी।

प्रफुल्ल—नहीं, यह भी है, दूसरे एमन बाबू भाई साहब के हाँ औषधालय में दवाइयाँ कूटा करते थे। देहात से भूखों आये थे।

दास बाबू—ओच्छा ?

पंडित जी—यह ठीक है दास बाबू ! कि एमन मेरे साथ रहे हैं, किन्तु किसी के यहाँ किसी परिस्थितिवश किसी का रहना उसे सामाजिकता से वंचित नहीं करता। स्वामी जी—दयानन्द जी—तथा गाँधी जी ने व्यक्ति के कर्मों पर अधिक जोर दिया है।

दास बाबू—नो, नो, हम किसी प्रकार एमन बाबू का तिरोस्कार नहीं करता। हम सुना आप एक 'शिक्खा-मंदिर' खोल रहा है, छोटा लोगों के वास्ते ?

एमन—नहीं, वहाँ हम सभी के बच्चों को शिक्षा देंगे।

पंडित जी—उसी के उद्घाटन समारोह के लिए ये मेरे पास आये हैं।

प्रफुल्ल—पर भाई साहब ! यहाँ तो सिद्धान्त का प्रश्न आ जाता है।

एमन—'शिक्षा मंदिर' में कोई सा भी सैद्धान्तिक प्रश्न हम नहीं उठाना चाहते। हम उसे सही अर्थों में राष्ट्रीय-शिक्षालय बनाना चाहते हैं। बड़े-बड़े लोगों के बच्चे जो कि अँग्रेजी शिक्षा ग्रहण करते हैं इस से उन की राष्ट्रीयता ही नष्ट हो जाती है।

दास बाबू—तो आप क्या सोचता है कि बड़ा लोग अपना बच्चों को ऐसे संस्थाओं में भेजेगा जहाँ किशम-किशम का छोटा लरका लोग पढ़ेगा ? नो ! आपको ए मोंदिर गरीब लोगों को वास्ते खोलना चाहिए। बड़ा लोग कैसे भेज सकता है ? एमन बाबू, सोचो ना !

एमन—क्यों ? राष्ट्रीय शिक्षा तो दोनों ही प्रकार से बच्चों को आवश्यक है।

दास बाबू—यू आर मिक्सिंग पालीटिक्स एण्ड एजूकेशन...एनी वे......

पंडित जी—कुछ चंदा-वंदा दिलवाइएगा दास बाबू !

दास बाबू—बोंगाली तो देगा नेई, नान-बोंगाली को बोल देगा। कोशिश कर देगा।

एमन—किन्तु मैं चन्दा नहीं चाहता। विद्यार्थी चाहूँगा !

दास बाबू—अफ़कोर्स ! मोगर होम लोग ओपना बच्चा को हेरो-केम्ब्रिज छोड़ कर 'शिक्खा मोंदिर' कैसे भेजेगा ?

प्रफुल्ल—तो दास बाबू ! हम जिस चर्चा के लिए आये हैं, शुरू किया जाये !

एमन—अच्छा पंडित जी ! मैं चलूँ, तो फिर आपका निर्णय......

प्रफुल्ल—एमन बाबू ! रुकिए न, देश-सेवक आप भी हैं। असहयोग के बारे में ही हम लोग बातें करने आये हैं। आप काँग्रेस में क्यों नहीं आ जाते ? वालेंटियरों की हमें जरूरत है। वह भी देश-सेवा ही है।

दास बाबू—आप असहयोग मानता है कि नहीं ?

एमन—देखिए मैं तो छोटा-सा अध्यापक हूँ और आप देश-भक्त लोग हैं। मेरे योग देने न देने का प्रश्न ही नहीं उठता।

पंडित जी—नहीं एमन ! मेरी आत्मिक इच्छा है कि तुम हमारे साथ काम करो।

प्रफुल्ल—आप नाहक हो औषधालय से चले गये। क्यों भाई साहब ! खादी भंडार के लिए अब तो आदमी की जरूरत होगी ही, वहाँ वेतन भी मिलेगा एमन बाबू ! ये शिक्षा मंदिर का काम चाहो तो दास बाबू तथा हम पर छोड़ दो।

एमन—(**एक क्षण तो प्रफुल्ल को घूरता है, फिर आत्म संयम के साथ**) धन्यवाद प्रफुल्ल बाबू ! हाँ पंडित जी काँग्रेस में आने के पहले मूल प्रश्न है नलिन बागची का आत्मोसर्ग, जलियान वाला काण्ड—ये सब बातें गाँधी जी के लिए कोई अर्थ रखती है कि नहीं ?

पंडित जी—गाँधी जी राजनीति में संयम एवं अहिंसा का प्रयोग करना चाहते हैं।

एमन—तो पंडित जी ! क्षमा करें, मैं इस प्रकार के प्रयोगों से सहमत नहीं जो

तर्क पर आधारित न हो कर नैतिकता की दुहाइयाँ लिये हुए हो। मैं तो पहले ही कह चुका आपसे कि गाँधी जी विजय चाहते हैं और हम कर्म। विजय शायद हमें न मिल कर गाँधी जी को ही मिल जाये, लेकिन......

प्रफुल्ल—तो आपका मतलब है गाँधी जी स्वराज्य की भीख माँग रहे हैं ?

एमन—यदि भीख माँगने से स्वराज्य मिले तो उन्हें शायद कोई आपत्ति नहीं होगी मैं समझता हूँ। एक तो स्वराज्य प्राप्ति का यह नया प्रयोग होगा। दूसरे और चाहे कुछ हो या न हो अहिंसा की रक्षा तो हो ही जायेगी।

पंडित जी—यह आपका आवेश है एमन बाबू ! वे जन-जागरण के द्वारा ही किसी भी वस्तु को स्वीकार करेंगे।

प्रफुल्ल—आपकी भाँति दो-चार दुस्साहसियों का यह गुट नहीं होगा, जिसे उन से भी अधिक दुस्साहसी अँग्रेज कुचल सकें।

एमन—खुदीराम बोस, नलिन बागची को प्रफुल्ल बाबू, दुस्साहसी तो मत कहिए। भले ही वे आपकी नीति से सहमत नहीं, परन्तु वे न तो देश के न आपके गाँधी के, किसी के भी शत्रु नहीं थे, यदि शत्रु थे तो अँग्रेज के।

प्रफुल्ल—जनाब ! हम अँग्रेज को भी अपना शत्रु नहीं मानते। शत्रु तो उन की शासन-प्रणाली है।

एमन—व्यक्तियों से उन की प्रणाली पृथक कर आप देख सकते हैं, गाँधी जी देख सकते हैं। तभी इन शहीदों की मृत्यु पर मौन रह सकते हैं। आज की देश-भक्ति कभी राजनीति का रूप लेगी और राजनीति में तो फिर सभी कुछ होता है।

दास बाबू—आइ सी, यू आर ए परफ़ेक्ट रिवोल्युशनरी, लेकिन एमन बाबू ! आपका 'अनुशीलन सोमिति, 'भोवानी मोंदिर योजना' आदि से क्या हुआ ? दो चार अँग्रेज मार दिया, बस ना ? हिंसात्मक एक्टीविटीज का रिझल्ट जब देख लिया तो क्यों नहीं गाँधी जी को चांस देता आप कि वे नेशनल फ़ाइट को इंटेन्स करें। बोमबाजी से क्या होगा बाबा ?

पंडित जी—गाँधी जी ने जो एक करोड़ सदस्य, एक करोड़ रुपया तथा विदेशी वस्त्र जलाने की योजना देश के सामने रखी है, उसे कार्यान्वित होने दें। यदि हम ऐसा कर सके तो ३१ दिसम्बर की आधी रात को इस असहयोग के कारण देश स्वतन्त्र हो जायेगा।

एमन—पंडित जी! इतिहास अग्नि है और मैं आँखें रखते हुए उस के साथ खेलना नहीं चाहूँगा। वैसे आपके कार्यक्रम में अँग्रेज के विरोध का जहाँ तक प्रश्न है मैं साथ हूँ। पर सच बात कह देना चाहता हूँ—पता नहीं हम इतिहास के किसी दशक में जा कर मिलते हैं कि नहीं? या मिलते भी हैं तो शायद हमारे गलों में फाँसी के फन्दे पड़े हों और तब हम कह न सकें। ऐसा लगता है कि गाँधीवाद भी सम्पूर्ण सत्य नहीं है और न यह अराजकतावाद ही पूरा सत्य है। इन सारे मतवादों को जीवन तथा इतिहास के सामने शिष्य की भाँति झुकना पड़ेगा, क्योंकि गुरु जीवन है और गाँधी शिष्य हैं।

पंडित जी—ख़ैर एमन बाबू! मुझे देख कर सुख होगा कि हम किसी भी मार्ग पर चल कर देश-सेवा करते हुए माँ को स्वतंत्र कर सकें।

एमन—अच्छा नमस्कार, तो मैं मान कर चलता हूँ कि आप उद्घाटन करने नहीं आयेंगे।

दास बाबू—पंडित जी ने अस्वीकार तो नहीं किया।

एमन—(हँसते हुए) मैं पहले ही कह चुका था दास बाबू कि गाँधीवादी, विनयशील अनुदार होता है।

(वह जाता है, सब हतप्रभ हो जाते हैं।)

प्रफुल्ल—ज़रा पेट भरा नहीं कि सिद्धान्त छाँटना शुरू कर दिया—मीडियाकर!

दास बाबू—(हँसता हुआ) थोड़ा और पेट भर जाने दो प्रफुल्ल बाबू, विलास सूझेगा। लेकिन मुझे यह आदमी भीषण लगता है।

(पटाक्षेप)

द्वितीय दृश्य

[एक सड़क का दृश्य । असहयोग आँदोलन का युग—१९२१ । सवेरे आठ बजे के लगभग का समय है । प्रभात फेरियाँ गाती नारे लगाती निकल जाती हैं । लोगों ने खादी के धोती कुरते और गाँधी टोपियाँ पहन रखी हैं । स्त्रियाँ श्वेत साड़ियों में हैं । कुछ के हाथों में तिरंगे हैं । पंडित जी, प्रफुल्ल बाबू व दास बाबू आदि नेता साथ चल रहे हैं । लोग ला-ला कर विदेशी कपड़े रखते जाते हैं और ढेर बना कर उन में आग लगा दी जाती है । टोलियाँ बराबर नारे लगाती जाती हैं—

भारत माता की जय !
वन्दे मातरम !
महात्मा गाँधी की जय !

गीत

बिजयी विश्व तिरंगा प्यारा,
झण्डा ऊँचा रहे हमारा !

गीत

सर बाँधे कफ़नवा हो
शहीदों की टोली निकली !
जनरल डायर के फ़ायर से
भूमि हो गयी लाल
कलेजे के पार गोली...निकली !
सर बाँधे कफ़नवा हो
शहीदों की टोली निकली !

यह दूसरी प्रभात फेरी रुक कर सभा का रूप धारण कर लेती

है। बीच में विदेशी कपड़ों की होली जलती है, लोग चारों ओर से घेरे हुए हैं। काँग्रेसी स्वयंसेवक हाथों में झोलियाँ लिये हुए लोगों से दान ले रहे हैं। स्त्रियाँ उदारता के साथ अपने अंगों पर से आभूषण निकाल निकाल कर सोत्साह झोलियों में डाल रही हैं। नोट और रुपये देखते-देखते झोलियों में डाले जा रहे हैं। बीच-बीच में वही नारे तथा गीत चल रहे हैं। जैसे ही दान का काम समाप्त होता है। एक ऊँचे चबूतरे पर दो तीन लड़कियाँ हाथ जोड़ कर खड़ी हो जाती हैं उन के सामने एक झंडा लहरा रहा है और वे 'वन्दे मातरम' गीत गाती हैं। जनता उस गान की प्रत्येक पंक्ति दुहराती है। गीत समाप्ति पर नारे लगते हैं। इसी बीच पुलिस के कुछ सिपाही लाल पगड़ी में दिखलायी पड़ते हैं। उसी चबूतरे पर पंडित सत्यकाम जी अपनी धवल वेशभूषा में हैं उन के भाषण का ढंग वही आर्यसमाजी भावुकता-पूर्ण भजनीकों-का-सा है—]

पंडित जी—उपस्थित भाइयो और बहनों! अभी मैंने आपके कण्ठों से माता की जयकार सुनी—यह जयकार थी? गलत! लगाइए मेरे साथ आवाज... वन्देऽऽ—

भीड़—(एक जयकार के साथ)—मातरम!

पंडित जी—हाँ! तो भाइयो, हमारी प्रत्येक जयकार, इतिहास बना रही है और हम से लिखाने वाला कौन है?...गाँधी महाराज! वे इस देश की विभूति हैं। उस दुबले आदमी ने मेंचेस्टर के पुतलीघरों पर जो प्रहार आज किया है, वह इस समय हमारे सामने प्रज्जवलित है। यह आजादी की होली है। आपको शपथ है, हमें सौगंध है जो इसकी आग बुझे तो। (**और यह कह कर वे रूमाल से मुँह तथा ओंठ छुआ लेते हैं**) तो भाइयो! कुछ लोगों को मैंने कहते सुना है कि गाँधी महाराज का रास्ता भीख का रास्ता है। तिलक महाराज का रास्ता गाँधी जी से अलग था—भाइयो, ये सब

बातें गलत हैं। हाँ गांधी जी का रास्ता अलग है, जरूर है—लेकिन किस से ? क्रांतिकारियों से, डाके डालने वालों से, अँग्रेज अफ़सरों को मारने वालों से (**तेज़ी से**) हम ये सब नहीं करेंगे—हम तो असहयोगी हैं, विद्रोही नहीं। विदेशी चीजों का बहिष्कार करो, विदेशी सत्ता कमजोर हो जायेगी। यहाँ विदेशी सूत का एक तार जला नहीं कि लन्दन की एक ईंट खिसकी नहीं।

(**जनता तालियाँ पीटती है।**)

—हमारे कुछ सिरफिरे नवजवान बम, पिस्तौल चलाते हैं—ग़लत बात है ! अँग्रेज के पास सेना है, पुलिस है, तोप, बन्दूक सभी कुछ है। अरे, गाँधी कहता है कि अँग्रेज की गोली से हमारे सीने छिद नहीं सकते, क्यों ? (**चारों ओर घूम कर जनता पर एक निगाह डालते हैं,**) इसलिए कि ये सीने (**सीने को हाथ से ठोंकते हैं,**) भारत की मिट्टी हैं—और मिट्टी में गोली मर जाती है !

(**जनता और भी ज़ोर से तालियाँ पीटती है।**)

मैं जब अपने ही प्रान्त में तथा बंगाल में क्रांतिकारियों के कारनामे सुनता हूँ तो मुझे दुख होता है। अरे भारतवर्ष, हिन्दुस्तान सिपाहियों का नहीं ऋषियों और फ़कीरों का देश है। गाँधी कहता है—देश के दीवानो ! अगर तुम्हारे एक गाल पर कोई चाँटा मारता हो तो दूसरा भी आगे कर दो !

[**जनता फिर तालियाँ पीटती है। भीड़—'भारत माता की जय', 'वन्दे मातरम', 'महात्मा गाँधी की जय !' नारे लगाती है तभी पुलिस इंसपेक्टर मंच की ओर बढ़ता है।**]

पुलिस इंसपेक्टर—(**पंडित जी से**) पंडित जी, भाषण बन्द कीजिए।

पंडित जी—(नाटकीय ढंग से, भीड़ को सम्बोधन करते हुए) सुना भाइयो, ये कहते हैं कि मैं भाषण बन्द कर दूँ ।

(भीड़ हँस पड़ती है ।)

जिला मेजिस्ट्रेट—(अँग्रेज़ है यह) वेल पंडित जी, टोमरा गाँडी नानकोपरेशन वापस कर लिया है। उस को हम गिरफ़्तार कर लिया है। टोम सीडा नेई मानेगा तो अरेस्ट करना माँगेगा ।

[तभी दास बाबू जो टिपीकल बंगाली हैं, । मंच पर आते हैं और एक तार पढ़ कर सुनाते हैं ।]

दास बाबू—भाइयो, अभी होमें तार मिला है कि चौरी-चौरा में जोनता ने पुलिस पर होमला बोला इस खातिर गाँधी जी मूवमेंट वोपस ले लिया, क्योंकि हिंशा हो रहा था । गाँधी जी को सोरकार ने गिरफ़्तार कोर लिया ।

(भीड़ उत्तेजित हो उठती है—नारे लगाती है :)

भारत माता की जय !
वन्दे मातरम !
महात्मा गाँधी की जय !
पंडित सत्यकाम की जय !

एक साधारण व्यक्ति—(भीड़ में से) गाँधी जी को पुलिस ने गिरफ़्तार किया, भाइयो ! (चिल्लाते हुए) पुलिस को मारो !

पुलिस इंसपेक्टर—(मेजिस्ट्रेट से) सर द मॉब इज़ प्रिपेयरिंग फ़ार अटेक आन द पोलिस ।

जिला मजिस्ट्रेट—(क्रोध से) डिसपर्स इट ।

[पुलिस इंसपेक्टर सीटी बजाता है—भीड़ से 'डिसपर्स' कहता है । भीड़ नहीं सुनती]

पुलिस इंसपेक्टर—सर ! लाठी चार्ज ?

जिला मेजिस्ट्रेट—यस !

पंडित जी—(भीड़ से) भाइयो ! सब कुछ हो पर हिंसा न कीजिएगा !

[पंडित जी और दास बाबू भीड़ से चिल्ला कर कुछ कहते जा रहे हैं। भीड़ सुनती नहीं। पुलिस के सिपाही चारों ओर से भीड़ पर लाठी ले कर टूट पड़ते हैं—भगदड़ मचती है। पुलिस झंडों को गिरा कर बूटों से रौंदती है—चिथड़े-चिथड़े कर देती है। भीड़ में से नारे आ रहे हैं। स्त्रियों को पुलिस घसीटती है—रोने-चिल्लाने का शोर बढ़ता है। इस सब के ऊपर मेजिस्ट्रेट ज़ोरों में फ़ायर की आज्ञा देता है। लोग धराशायी होते हैं, भागते हैं। पुलिस पंडित जी तथा दास बाबू, प्रफुल्ल बाबू आदि को पकड़ कर गिरफ़्तार करती है। इस बीच में एमन दिखायी पड़ता है। वह ऐसे स्थान पर खड़ा है, जैसे वह इस जन-विद्रोह का देव-प्रतीक हो—]

एमन—(स्वगत) गाँधी बाबा ! असहयोग रोक कर हिमालय की सी भूल की है। इतिहास अग्नि है। इस अग्नि के प्रयोग बैरिस्टर और लखपती करेंगे गाँधी बाबा ! जनता के विद्रोह को अँग्रेज संगीनों से और गाँधी बाबा तुम चरखे से दबाना चाहते हो पर क्यों ?

(और वह खिच उठता है प्रत्यंचवत)

(पटाक्षेप)

तृतीय दृश्य

[रात का घना अंधकार है। छोटी सी ढिबरी जल रही है। एमन के छोटे से कमरे की सज्जा में यह कहा जा सकता है कि चार दीवारें हैं, छत भी है। दीवार पर सरस्वती का चित्र है बस! यह एमन का बासा है। इस कमरे के पीछे बरामदा है, रसोई-घर आदि हैं (जिस का मंच से कोई सम्बन्ध नहीं) ढिबरी को बीच में रखे एमन तथा उसका मित्र एवं 'शिक्षा मन्दिर' का सह-अध्यापक वारुणी बनर्जी बैठे हैं। एमन के हाथों में दैनिक 'प्रताप' है। जिसे वह ज़ोर ज़ोर से पढ़ कर वारुणी को सुनाता है। वारुणी, एमन से दो एक वर्ष छोटा ही होगा। वारुणी धोती कुरता तथा चादर में है। चश्मा लगाये है। चपटे सिर का घुँघराले बालों वाला वारुणी प्रभाव डालता है।]

एमन—(दैनिक 'प्रताप' पढ़ते हुए) प्रान्तीय राजनीतिक कान्फ्रेन्स ने सिराजगंज की अपनी बैठक में सर चार्ल्स टेगर्ट पर आक्रमण के लिए उत्सुक नवयुवक गोपी मोहन साहा की फाँसी पर प्रस्ताव पास किया है—जिस में साहा की वीरता की प्रशंसा की है। देशबन्धु दास ने भी साहा के कार्य को उचित ठहराया है, किन्तु गाँधी जी ने साहा के कार्य की तथा प्रस्ताव की भर्त्सना की है। बंगाल में आज प्रत्येक नवयुवक के कण्ठ में गोपी मोहन साहा का यह अमर वाक्य गूँज रहा है। 'भारतीय राजनीति क्षेत्रे अहिंसार स्थान नेई!'

[अखबार बन्द कर एमन खड़ा हो जाता है और टहलने लगता है। वारुणी जो कि बैठा हुआ है एकदम लाल हो जाता है।]

वारुणी—वेल, दिस गाँधी इज़ नथिंग बट इम्पोज़्ड मार्टिन लूथर इन पालिटिक्स। हेज़ ही नथिंग एल्स टू डू बेटर देन पालिटिक्स? आइ केन गेट ए जॉब फॉर हिम इन सम टोबेको फ़र्म—अहिंशा, अहिंशा—नानसेन्स!

एमन—(**टहलते-टहलते एकदम रुक जाता है। एक क्षण को वारुणी की ओर देखता है, फिर शून्य में ताकने लगता है। जैसे वह सोच रहा हो, फिर**) गाँधी जी आखिर क्या चाहते हैं? समझ में नहीं आता वारुणी। क्या गाँधी जी सचमुच ही सोचते हैं कि हम विद्रोहियों की कोई राजनीतिक-विचारधारा नहीं? हम प्रजातंत्र चाहते हैं गाँधी बाबा! और हमारे संगठन इसी की स्थापना में तो कार्य कर रहे हैं। साहा की रक्त-आहुति की तुम निन्दा करते हो? तुमसे बड़ा कोई देशद्रोही नहीं गाँधी बाबा!

वारुणी—एमन दा इस दुराग्रह का उत्तर यही होगा की हम अपने सिद्धान्तों को और अधिक स्पष्ट समझें। प्रजातन्त्र का कोई सा भी राजकीय-तंत्र आर्थिक ढाँचे पर ही खड़ा होता है।;यह ठीक है कि हम ने—'हिन्दुस्तान प्रजातांत्रिक संघ' की स्थापना कर ली है और सारे क्रांतिकारी दल अब केवल विद्रोही संगठन भर नहीं हैं।

एमन—वारुणी! बनारस से कल शचीबाबू ने रवीन्द्र कर को भेजा था जो यह 'रिवोल्यूशनरी' पर्चा दे गया है (**वह कोने में रखी किताबों में से एक उठाता है, जिसके पन्नों में से एक काग़ज़ निकालता है और वारुणी को देता है।**) मैं सोचता हूँ कि भवानी मंदिर की योजना का अब कोई अर्थ नहीं रहता।

(**इस बीच वारुणी पर्चा पढ़ता है—पढ़ चुकने पर—**)

वारुणी—हमें अब शीघ्र काम शुरू कर देना चाहिए। क्या बनारस से कोई साथी नहीं आ सकता? न हो आप खुद चले जायें और शचीबाबू या जोगेशबाबू आदि से मिल आयें।

एमन—कठिन है, पर हमें शीघ्र ही ये काम करने होंगे कि एक तो दल का संगटन अधिक व्यापक न करते हुए भी इसकी संकुचितता तोड़नी होगी,

दूसरे हमारे पास काफ़ी हथियार हों, इस के लिए पैसा इकट्ठा करना होगा।

वारुणी—चंदे से यह रकम इकट्ठी होने से रही। 'शिक्षा मंदिर' के लिए जब काफ़ी नहीं पड़ रहा है तब भला इस काम के लिए...(धीरे से) क्यों न डाका डाला जाय कहीं ?

[दरी पर कहीं कुछ खटका होता है और भागते पदचाप-की-सी आहट होती है।]

एमन—क्या बात है वारुणी ? देखो तो !

(वारुणी जाता है और कुछ क्षण बाद लौटता है।)

वारुणी—(किंचित घबराते हुए) अँधेरे में कुछ दिखा नहीं। (हाथ-घड़ी देखते हुए) तो बारा बजा है।

एमन—अगले शनिवार को फूटा मस्जिद में रात दस बजे—समझे ?

वारुणी—यस !

(पटाक्षेप)

चतुर्थ दृश्य

[स्थान फूटी मस्जिद। समय रात्रि के बारह। गहन अँधार। मस्जिद का यह पिछला हिस्सा उजाड़ प्रदेश है, शहर से अत्यन्त दूर। पुराने काल की दीवारों से सटी खड़ी दो मोमबत्तियाँ जल रही हैं। उस प्रकाश में दीवारों का कालापन और काई साफ़ दिखती है। लगभग दस व्यक्ति बैठे हैं। एमन बीच

में गम्भीर बना बैठा है। मंच की ओर तीन चार लोगों की पीठ है। एमन के दाहिने वारुणी है, बाँयें सविता सान्याल नामक एक १८ वर्षिय नवयुवती बैठी है। सविता के पास ही कमलाकर त्रिपाठी नाम का एक काला सा युवक बैठा है। वारुणी के पास रशीद नामक एक मुसलमान युवक बैठा है जो सुन्दर है। ये प्रमुख हैं।]

एमन—(अत्यन्त गम्भीर रूपे) पहरे पर कौन है सविता ?

सविता—किशोर उधर आगे बैठा है।

(सब आश्वस्त होकर बैठते हैं।)

एमन—तो हम दो वर्ष के बाद मिल रहे हैं। अब हम प्रजातांत्रिक दल के सिद्धान्तों के अनुसार संगठित होंगे। किन्तु दो वर्ष महत्वपूर्ण भी रहे हैं। गाँधी जी के असहयोग का नाटक हमने देख ही लिया। उनके लिए देश, स्वतंत्रता, जनता से भी अधिक प्रिय है—अहिंसा ! किन्तु मैं या हम सब गोपी मोहन साहा के इस कथन को पूरी तरह मानते हैं—भारतीय राजनीति क्षेत्रे अहिसार स्थान नेई ?

[सब के मुख तँबिया उठते हैं और प्रत्यंच सा खिचाव स्पष्ट हो उठता है।]

—काँग्रेस, त्यागियों की संस्था है—(सब हँस पड़ते हैं।) बैरिस्टर और पचास-पचास मकानों का किराया वसूलने वालों की संस्था है। अपने को दूसरों से श्रेष्ठ समझने वालों की संस्था है। किन्तु हमारा वह मार्ग नहीं। हमें अपने देश को प्रजातन्त्र की स्थापना के लिए शस्त्र से स्वाधीन करना है। वकीलों की संस्था का उद्देश्य है—विजय ! जब कि हमारा उद्देश्य है कर्म ! चाहे काँग्रेसी नेता और अँग्रेज हमें बदनाम करें,

सामाजिक स्वरूप की हमारी कल्पना है और जिसके लिए सशस्त्र क्रांति हमारा मार्ग है।

सब—हीयर...हीयर, हीयर...हीयर !

वारुणी—साथियो ! अपने दल के नायक के लिए मैं एमन का नाम प्रस्तावित करता हूँ।

रशीद—मैं समझता हूँ कि हमें किसी तरह की रस्मी कार्यवाही की बजाय बनर्जी बाबू की बात मान लेनी चाहिए।

[सब हौले से ताली बजाते हैं। सब खड़े हो जाते हैं—कुछ देर चुप रह कर फिर बैठ जाते हैं।]

एमन—ठीक है, दल के नियम वैसे ही कठोर रहेंगे ! अब एक बात पर विचार करना बहुत आवश्यक है, वह यह कि दल को शस्त्रों की आवश्यकता है और इसके लिए धन चाहिए।

वारुणी—वैसे तो इतना धन सम्भव नहीं इसलिए......

कमलाकर—बस कहीं डाका डाला जाय !

(एमन और वारुणी दोनों उसे घूरते हैं।)

कमलाकर—मैंने कोई गलत बात तो नहीं कही ?

एमन—(**कठोर भाव से**) नहीं !

रशीद—अगर एमन दा इजाजत दें तो कुछ अर्ज करूँ।

एमन—हाँ, रशीद भाई, कहिए।

रशीद—फिलहाल यह करना ठीक नहीं, क्योंकि सरकार चौकन्नी हो जायेगी कि

हम उसे सहज चुनौती ही नहीं दे रहे, बल्कि उसकी जड़ खोदने पर आमादा हैं।

सविता—मैं समझती हूँ कि रशीद की बात सही है। लेकिन इसके सिवाय दूसरा उपाय क्या है?

एमन—ठीक है! हमारा पिछला अनुभव यह है कि छोटे-छोटे डाकों से एक तो आर्थिक लाभ नहीं होता, दूसरे शक्ति भी नष्ट होती है।

वारुणी—एमन दा की बात एकदम ठीक है। ज्यादा अच्छा तो यह होगा कि डाकगाड़ी के खजाने को ही लूटा जाये।

सब साथी—(लगभग सभी—केवल रशीद को छोड़कर, जोश के साथ) जरूर जरूर!

एमन—तो इस अभियान के नेता होंगे वारुणी और सतीश तुम......

सतीश—(दुबला-पतला लम्बा सा युवक है, जिसकी पीठ मंच की ओर है।) जी!

एमन—तुम्हारा काम होगा वारुणी बाबू को डाक गाड़ी की सारी सूचना देते रहना! तो रशीद! तुम क्या सोचते हो?

रशीद—दल की एक-एक बात मुझे कुरान की मानिन्द मंजूर है।

(पटाक्षेप)

पंचम दृश्य

[प्रभात फेरी वाले बाज़ार का दृश्य। एक पान की दुकान, एक सब्जी वाले की दुकान, हलवाई आदि की दुकानें दिखायी देती हैं। हलवाई की

दुकान पर पीतल की साँकल में घंटा लटक रहा है । दो एक पालिश वाले फुटपाथ पर बैठे हैं । सवेरे का समय है । स्नानार्थी लोग गंगा स्नान से लौटते हुए रामनामी ओढ़े, आ-जा रहे हैं । एक अख़बार वाला लड़का 'दैनिक प्रताप' आदि की प्रतियाँ लेकर दौड़ता हुआ आता है और ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाने लगता है—]

अख़बार वाला—राजपुर के पास डाक गाड़ी लूट ली गयी !...हज़ारों मारे गये, लाखों लूट लिये गये !...पढ़िए, ताज़ा समाचार प्रताप में पढ़िए !...क्रान्तिकारियों की गोली की आवाज़ से लंदन काँप उठा !... पढ़िए, पढ़िए ! एक रात में चालीस गिरफ़्तारियाँ !...सरकारी ख़ज़ाना लूट लिया बहादुरों ने !

[लोग हाथों-हाथ अख़बार की प्रतियाँ ख़रीद रहे हैं । उनके मुखों पर हवाइयाँ उड़ रही हैं ।]

सिपाही—(हलवाई की दुकान पर जलेबियाँ खाता हुआ) क्या कहता है बे ? बहादुरों ने ?

अख़बार वाला—(कुछ मसख़रेपन के साथ, कुछ बनावटी डर के साथ भी) हवलदार साब ! यही तो अख़बार में लिखा है ।

सिपाही—अबे अख़बार के बच्चे ! दूँगा एक डण्डे की । भूल जायेगा अख़बार बेचना ।

व्यक्ति १—क्या बात है सिपाही जी ?

सिपाही—डाकुओं को साला, बहादुर कहता है ।

व्यक्ति २—तो क्या बुरा कहता है ? बहादुर नहीं तो क्या है ?

व्यक्ति ३—सिपाही जी । आजकल के लौंड़े सब 'नवम्बर' हैं ।

(सब हँस पड़ते हैं ।)

सिपाही—क्या मतलब जनाब ?

व्यक्ति १—अरे बनारस जेल का किस्सा भूल गये सिपैया जी, एक लड़के से पूछा नाम बताओ—उत्तर मिला—नवम्बर !

व्यक्ति २—बाप का नाम ?

व्यक्ति १—दिसम्बर !

(सब लोग हँस पड़ते हैं ।)

व्यक्ति ३—और वो आज़ाद वाला जवाब ? नाम बता बे लड़के...

व्यक्ति १—(तपाक से)—आज़ाद !

व्यक्ति २—बाप का नाम ?

व्यक्ति १—स्वाधीन !

व्यक्ति ३—मकान ?

व्यक्ति १—जेलख़ाना !

[सब हँसते हैं । तभी भीड़ में से कोई चिल्ला पड़ता है । वन्दे मातरम ! भारत माता की जय ! सिपाही जी घबरा जाते हैं । घूरते हुए एक तरफ़ को चल देते है । वहीं एक आदमी ज़ोर से अख़बार पढ़ता है, कुछ लोग ख़बर सुनने के लिए उसे घेर लेते हैं । आसपास वाले दुकानदार भी सुनने लगते हैं ।]

नागरिक—(अख़बार पढ़ते हुए) राजपुर के पास ट्रेन रोक कर डाक गाड़ी लूट ली...गार्ड औंधे मुँह लेटा रहा । यात्रियों से कह दिया गया था कि वे चुप रहें । डाकू माल लेकर चम्पत हो गये । यह काम क्रांतिकारियों का मालूम होता है । डाकू लोग भागते समय भूल में चादर छोड़ गये । उक्त सम्बन्ध में रात पुलिस ने लखनऊ, कानपुर, बनारस आदि शहरों में क्रांतिकारियों के अड्डों पर छापे मारे । अब तक जो पकड़े गये हैं, उनमें सुप्रसिद्ध क्रान्तिकारी

एमन, वारुणी बनर्जी, सविता सान्याल तथा रशीद के नाम बताये गये हैं। दास बाबू के घर भी रात तलाशी हुई थी।

व्यक्ति १—कौन, एमन बाबू? शिक्षा मन्दिर वाले?

व्यक्ति २—नहीं जी कोई दूसरा होगा। वे तो बड़े सीधे और शरीफ़ मालूम होते हैं।

व्यक्ति ३—तो क्रान्तिकारी शरीफ़ नहीं होते? काँग्रेसियों ने ही शराफ़त का ठेका ले रखा है।

व्यक्ति १—कुछ भी कहो आदमी बड़ा जोरदार है। कल ही तो मैंने उनकी एक कहानी—'आग के पुतले'—पढ़ी—बस हिला के रख देती है।

हलवाई—अरे एमन बाबू को जितना मैं जानता हूँ उतना कोई क्या जानेगा? हैं देवता। मैंने भी वो जलेबियाँ खिलायीं हैं उन्हें कि बस! बड़े बहादुर हैं। किसी दूसरे में है तागद? दास बाबू? पंडित जी?

एक व्यक्ति—अच्छा, अगर पुलिस को मालूम हो जाय कि एमन बाबू को तुम जलेबियाँ खिलाते हो तो बाँध देगी सात साल के लिए।

पानवाला—मजाक है जो बाँध देगी! हम तो दुकानदार हैं, जो पैसा फेंकेगा उसे सौदा देना होगा। (हलवाई से) क्यों छोगेमल!

हलवाई—सचमुच हम डरपोक हो गये हैं हिंदुस्तानी।

एक व्यक्ति—बड़ा वीर आया है। तकली और पिस्तौल से अँग्रेज चले जायें तो नाम बदल डालूँ। घर के कपड़े जलाने से आजादी आती हो तो लाओ हम सारे कपड़े जला डालें।

कोई व्यक्ति—हाँ भाई, मारेंगे एक अँग्रेज और मरेंगे बीस देसी—साथ में बीसियों को कालापानी, पाँच पाँच दस दस बरस के लिए जेल, खाना-तलाशी... और सब के ऊपर जो-हुजूरी मुफ़्त में।

एक *व्यक्ति*—भले आदमियों की तरह तो रहेंगे नहीं और साले बटमारी करेंगे। फौजें हैं इनके पास जो लड़ेंगे ? (मुँह बनाकर) चार गधे मिल गये और वन्दे ऽऽ मातरम !

[भीड़ में से कुछ चिल्लाते हैं—मारो सालों को, 'वन्दे मातरम' की खिल्ली उड़ाता है—भीड़ उत्तेजित हो जाती है......मारो, मारो......]

कुछ *लोग*—पुलिस का आदमी है रे यह तो......

[लोगों के नारे—'वन्दे मातरम', 'भारत माता की जय'—भाग दौड़—पुलिस की सीटियाँ आदि।]

(पटाक्षेप)

षष्ठ दृश्य

[अदालत का कमरा। समय उपरान्ह। अँग्रेज़ न्यायाधीश दाहिने हाथ पर बैठा हुआ है। बाँयें हाथ के कोने में लम्बा कठघरा है, जहाँ एमन, वारुणी, सविता, रशीद तथा तीन साथी हथकड़ी पहने बैठे हैं। अँग्रेज़ सार्जेन्ट तैनात है। चार पुलिस के जवान बन्दूकें कंधे पर धरे मुस्तैद खड़े हैं। इस कठघरे से अलग, मंच के बीच में एक छोटा कठघरा है जहाँ जिरह की जाती है। इस समय इसमें मुखबिर कमलाकर त्रिपाठी बैठा हुआ है। मुखबिर की रक्षा के लिए दो सिपाही तैनात हैं। मुखबिर के ठीक पीछे ऊँचाई पर रानी विक्टोरिया सप्तम एडवर्ड और पंचम जार्ज के बड़े-बड़े चित्र दीवारों पर तीनों ओर लगे हुए हैं। अदालत में पुराने ढंग का लाल झूलवाला बड़ा सा पंखा टँगा है।

वकील काला चोगा पहने हुए हैं। क्रांतिकारियों के वकील दास बाबू हैं। दर्शकों से पूरा इजलास भरा हुआ है। दर्शकों में प्रफुल्ल बाबू, पंडित सत्यकाम वेदव्रत आदि हैं।]

दास बाबू—(एमन बाबू की ओर पहले देखते हैं, फिर मुखबिर कमलाकर त्रिपाठी से।) तो आप एमन बाबू को जानते हैं?

कमलाकर—बहुत अच्छी तरह, साथ ही में चन्द्रशेखर आजाद, यतीन्द्रनाथ, सान्याल बाबू......

दास बाबू—जितना पूछा जा रहा है उतना ही जवाब दो। तो जिस रात फूटी मस्जिद में हिन्दुस्तान प्रजातान्त्रिक संघ की पहली बैठक हुई, जिसमें नायक एमन बाबू चुने गये, इस मीटिंग के बाद तुम कहाँ गये?

कमलाकर—क्या मतलब? घर गया और कहाँ?

दास बाबू—इसकी सूचना देने तुम सीधे थाने नहीं गये?

सरकारी वकील—माई लार्ड! दिस इज़ आब्जेक्शनेबल।

मेजिस्ट्रेट—दि कोर्ट डज़ नाट परमिट यू टू आस्क सच क्वश्चन्स मिस्टर दास!

दास बाबू—(काग़ज़ देखते हुए) डाकगाड़ी लूटी जाय—इस सुझाव का समर्थन सब से पहले तुमने किया था?

कमलाकर—(एमन की ओर और फिर वारुणी की ओर देख कर) न करता तो क्या करता, एमन बाबू की पिस्तौल का निशाना कौन बनता?

दास बाबू—तो यह डाका चन्दे के लिए डाला गया था या आतंक के लिए।

सरकारी वकील—माई लार्ड। दिस इज़ इर्रेलेवेण्ट एट दिस स्टेज।

दास बाबू—डाके के परपज़ के लिए यह क्वश्चन जरूरी है।

मेजिस्ट्रेट—यस, परमिटेड मि० बोस!

कमलाकर—असल बात यह थी जो मैं पहले भी बता चुका हूँ कि एक जहाज़ में

गुप्त रूप से इन क्रांतिकारियों के लिए अस्त्र आये थे। जिसके लिए धन की आवश्यकता थी। यह डाका इसी उद्देश्य के लिए था। पहले भी मैंने स्वयं दल के लिए, अपनी डाकखाने की नौकरी के समय डाकखाने से २३००) उड़ाया था।

दास बाबू—मालूम होता है आपकी स्मृति बहुत तेज़ है।

कमलाकर—अरे साहब, इन लोगों के साथ कहाँ-कहाँ पानी पिया, पान खाया सब याद है और तो और जवाहर लाल नेहरू तक इस दल में शामिल हैं।

सरकारी वकील—यदि मि० दास को कोई खास बात पूछनी हो तो ठीक है माई लार्ड ! नहीं तो......

दास बाबू—आप इन लोगों के साथ कितने दिनों से थे ?

कमलाकर—पिछले दस बरस से। तभी न मैं एक एमन बाबू ही नहीं, इनके जैसे जितने भी सरकार के दुश्मन हैं, सबको जानता हूँ। डाके की बात एमन बाबू ने सुझायी थी, मगर डाक गाड़ी के सरकारी ख़जाने को लूटने की बात वारुणी बनर्जी की थी और वे ही इस अभियान के नेता थे।

दास बाबू—(**मेजिस्ट्रेट से**) अब मुझे कुछ नहीं पूछना माई लार्ड !

[इसी बीच मुखबिर को लेकर पुलिस के दोनों जवान जाते हैं। अदालत के दर्शकों में खुसपुस होती है। मेजिस्ट्रेट तीन बार टेबल बजाते हैं।]

मेजिस्ट्रेट—(**एमन की ओर देखते हुए**) हेव यू एनी थिंग टू से ?

एमन—(**सहसा सिंह सा तन जाता है। आँखें चमक उठती हैं।**)—यस ! मैं जानता हूँ कि इस न्याय के ढोंग का क्या होगा। मैं इस अदालत और

इसकी सत्ता दोनों को नहीं मानता। फिर भी जानता हूँ कि फांसी, कालापानी और लम्बी सज़ाएँ हमारी प्रतीक्षा कर रही हैं। मुझे अपने देशवासियों से यही कहना है कि हमारे संगठन के बारे में दूसरे राजनीतिक नेता गलत बात का प्रचार करते हैं। हम क्रांतिकारियों का हिंसा धर्म नहीं है, शस्त्र है। हम आतंकवादी नहीं हैं। हमारे भी सिद्धान्त हैं। हम या आज़ाद या यतीन्द्र कोई रहें या न रहें, परन्तु मेरे देशवासी यह न भूलें कि क्रांतिकारी भी प्रजातन्त्र में विश्वास करते हैं। आर्थिक समानता के आधार पर हम भी समाज का पुनर्गठन करना चाहते हैं। और आज नहीं तो कल, वर्गवाद का सिद्धान्त इतिहास के सामने खड़ा हो जायेगा। (कमलाकर की ओर देखते हुए, जो कि कोने में एक तरफ़ जवानों से घिरा बैठा है।) माँ की आँखों में आँसू भी जिसको मनुष्य नहीं बना सके उस अपवाद को क्या कहा जाये? और (एक बार कमरे की दीवारों पर लगे महारानी विक्टोरिया, सप्तम एडवर्ड, तथा पंचम जार्ज के चित्रों को देख कर तथा मेजिस्ट्रेट को घूर कर, एक क्षण शान्त हो कर—) आई विश दि डाउनफ़ाल आफ़ दि ब्रिटिश एम्पायर!

[उसके सभी साथी मुट्ठियाँ तान कर खड़े हो जाते हैं और वाक्य दोहरा कर घोषवत् हो जाता है।]

वी विश दि डाउनफाल आफ़ दि ब्रिटिश एम्पायर!

[अदालत में तहलका सा मच जाता है। लोगों के चेहरे भावना में चमक उठते हैं। न्यायाधीश महोदय तीन बार टेबल बजाते हैं, ज़ोर से—]

मेजिस्ट्रेट—द कोर्ट एडजर्न्स फार हाफ़ एन अवर!

[मेजिस्ट्रेट उठते हैं, सब खड़े हो जाते हैं। पटाक्षेप। क्षीण विराम।

यवनिका फिर उठती है—मेजिस्ट्रेट आते हैं, सब खड़े हो जाते हैं। वे बैठते हैं, सब बैठते हैं। अदालत में खुसपुस होती है।]

मेजिस्ट्रेट—(तीन बार टेबल बजाने के उपरान्त) सारे बयानों को सुनने के बाद कोर्ट का फैसला है कि वारुणी बनर्जी, सविता सान्याल और रशीद को फाँसी की सज़ा दी जाती है। एमन को १५ वर्ष का कठिन कारावास। रामदीन चौधरी को आजन्म कारावास। कालीप्रिय गांगुली और आनन्द माधव तेंदुरकर को ९-९ वर्ष का सपरिश्रम कारावास।

[कमरे में शोर-सा होता है—सभी बन्दी मुठ्ठियाँ तान कर चीख पड़ते हैं।]

वन्दे मातरम ! भारत माता की जय ! क्रांति अमर हो !

[स्त्रियाँ भावावेश में रो पड़ती हैं। पुलिस कैदियों को घेर लेती है। न्यायधीश उठ कर चलने को होते हैं।]

(पटाक्षेप)
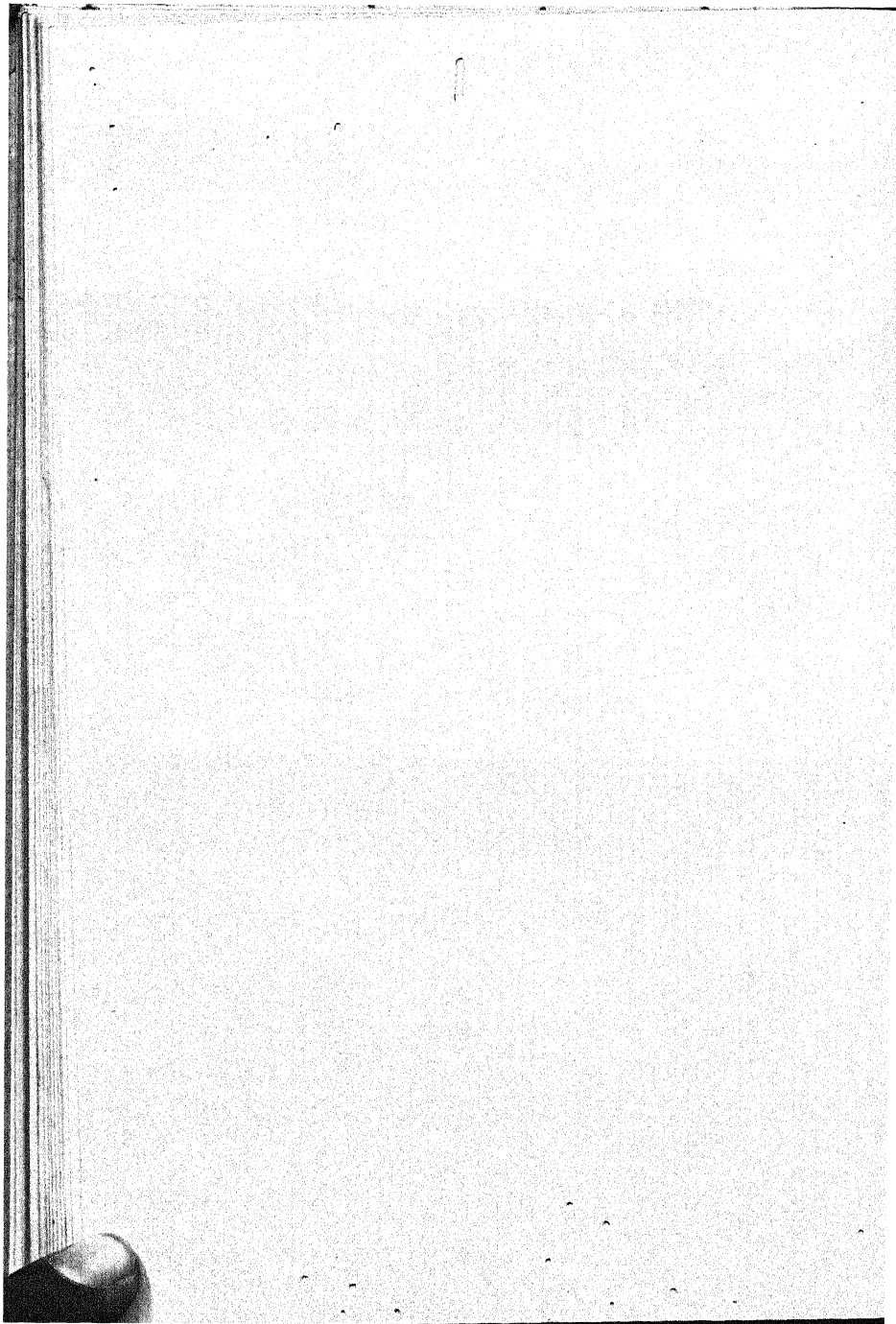
तृतीय अंक

सूत्र दृश्य ३

[मंच पर वही गहरा अन्धकार हो जाता है। जेल का प्राथमिक दृश्य सम्मुख आता है। जेल के कांस्य घंटे में दो बजते हैं—पुलिस की सीटियाँ तथा वातावरण शेषानुसार।]

संतरी—(दूर से डाक रूपे) गार्ड ! सात नम्बर सेल ! ताला बेड़ी आलरेटऽऽ ?

गार्ड—(उसी रीते) सात नम्बर सेल ! ताला-बेड़ी आलरेटऽऽ !

संतरी—(अधिक दूरी पर, डाक रूपे) गार्ड ! बार नम्बर सेल ! ताला बेड़ी आलरेटऽऽ ?

(और पृष्ठ-भूमि में यह प्रतिसतर्कता डूब जाती है।)

एमन—(मुड़ कर पृष्ठ-भूमि के वातावरण को घूरते हुए) उस जेल यात्रा और आज की जेल यात्रा में कितना अंतर है ? प्रभेद के दो छोर तब ज्वार और तूफ़ान के शिखर थे, लेकिन आज ? सिवाय भाटे की नींव के क्या है ? तब सरकार के बाहर देश-भक्ति वास करती थी, किन्तु आज सरकार में देश-भक्ति है।...शायद दोनों में एक विचित्र एकता है—वह है आतंक ! स्वाधीनता की नींव रखने वाले सब फाँसी पा गये। किन्तु तब के राव राजा और बैरिस्टर आज मन्त्री हैं। गरीबी तब भी राजद्रोह थी और आज भी है। पहले फन्दा रेशमी था और आज......

(लखन की बूट टापें)

लखन—एमन साब ! मुझे तो लगता है कि कोई भी हो, गरीबी कोई दूर नहीं करना चाहता।

एमन—नहीं लखन ! मनुष्य पर से विश्वास न उठाओ। कभी तो निश्चय की

संकल्प-अंगुलि में अग्निजल जागेगा ! हमें अनासक्त, असंपृक्त, मोहहीन होना ही होगा। कमलनाल से मूर्ति नहीं तराशी जा सकती—छेनी से रूप और प्राण दोनों संचरित होते हैं......

(लखन की बूट टापें)

लखन—पानी-वानी कुछ नहीं चाहिए एमन बाबू ?

[एमन अपने से परे कहीं खोया सा है। जेल के बुर्ज के ऊपर ठहरे पीताभ चन्द्रमा को वह घूरता रह जाता है। लखन चला जाता है।]

एमन—(फिर उसी तरह दरवाज़े के सीखचों पर सिर टिका लेता है) जेल के पन्द्रह वर्षों ने तब शिक्षा दी थी—क्रांति व्यक्ति और दल का धर्म नहीं, वह तो जन-बल की ऐतिहासिक अभिव्यक्ति है।

प्रथम दृश्य

[समय प्रातः आठ। अत्यन्त सादा कमरा। दायें हाथ पर एक खिड़की है तथा बाहर के लिए दरवाज़ा। बायें हाथ पर बाँस के एक रेक में पुस्तकें हैं। दीवार पर रवीन्द्र, गोर्की तथा मार्क्स के रेखाचित्र टँगे हैं। अहीर टोली में एमन का यह कमरा है, जिसे उसका बासा कहा जा सकता है। एक ओर लोहे की अँगोठी, दो चार बर्तन, दो एक टिन के डिब्बे पड़े हैं। एमन अपनी खाट पर तकिया सीने से लगाये औंधा लेटा हुआ फुलस्केप कागज़ पर कुछ लिख रहा है। लिखे हुए कागज़ इधर-उधर बिखरे पड़े हैं। एमन की आयु ४५ के आस-पास है। काले पानी से लौटते हुए इस बार वह एडवर्ड कट की डाढ़ी बढ़ाकर आया है जो हल्की खिचड़ी सी हो चली है। सिर पर छँटे बाल हैं। नाक पर चश्मा है। धोती पहने है

खादी की तथा बिहारी बनियान। खाट के पास ही बाँस की आराम-कुर्सी पड़ी है, जिस पर तौलिया सूख रहा है। तभी सांकल की आवाज़ सुनायी देती है।]

एमन—(चौंक कर) कौन ? (दोबारा सांकल सुन हड़बड़ाता है और उठ कर दरवाज़े तक जाता है।) अरे आप दक्षिणा जी ? आइए—आशुन !

[वह तेज़ी से पहले तो कागज़-पत्र सम्हालता है। उन्हें सिरहाने सहेज, खूंटी टँगा कुरता पहनना चाहता है। तब तक आश्चर्य-मिश्रित, किंचित हास्य संगे नाटकीयता के साथ दक्षिणा कोने में मुँह फेरे खड़ी रहती है। दक्षिणा खादी की अत्यन्त सादी साड़ी में है। पल्लू बायें से लेकर कमर में खुँसा हुआ है। सफ़ेद ही ब्लाउज़ है, पैरों में चप्पल और कंधे झोला। आयु यही ३० के आसपास। गोलमुख—और बड़ा सा बंगाली जूड़ा।]

दक्षिणा—शायद लिख रहे थे ?

एमन—(दक्षिणा के सामने खड़ा असमंजस सा) जी, हाँ, नहीं......

दक्षिणा—(हँसते हुए) अब तो बैठने के लिए कहिए एमन बाबू !

एमन—(बाँस की कुर्सी से तौलिया हटाते हुए) आई एम सॉरी, बैठिए—

दक्षिणा—मैं भी महिला हूँ एमन साब ! यह क्या कि मुझे ही बैठने के लिए कहना पड़ा। (हँस देती है।) कुछ तो नारी का सम्मान करना सीखिए—

एमन—(सिटपिटाते हुए) क्या बताऊँ...आप...

दक्षिणा—(हँसते हुए) माना कि आप को पन्द्रह वर्षों तक जेल में रहना पड़ा, लेकिन और लोग भी तो जेल जाते रहे हैं। उनमें से कई तो बड़े सभ्य बन कर निकले हैं।

एमन—(तपाक से) जी हाँ वे 'ए' श्रेणी की पैदावार हैं। (दोनों ही हँस पड़ते हैं।) सवेरे सवेरे कहाँ से ?

दक्षिणा—(बनावटी गम्भीरता के साथ) चेतन के लिए समय की संज्ञा होती है, जड़ के लिए नहीं एमन बाबू !

एमन—(उसी ढंग से) तो जड़ अब चलने भी लगे—पिछले १५ वर्षों में बड़ा परिवर्तन हो गया ?

दक्षिणा—तो आप क्या सोचते थे कि लौटने पर वही बमगार्टी का काम करेंगे ? ना बाबा ! जानते हैं हम जिस युग में अब आये हैं वहाँ विद्रोह, हिंसा आदि बातें पाप हैं—जानते हैं ? प्रार्थना, प्रस्ताव ही आज के युग-सत्य हैं !

(दोनों हँस पड़ते हैं ।)

एमन—मानव जाति जब तक यह निर्णय करे कि वह विद्रोह करे अथवा प्रार्थना, तब तक क्यों न हम लोग चाय ही पी डालें ।

(किंचित हास्य)

दक्षिणा—चाय तो ज़रूर ही पीना चाहती हूँ, किन्तु क्या यह सम्भव होगा कि हम लोग बाहर चल कर कहीं पियें ?

एमन—(किंचित संकोच संगे) बाहर ? हाँ आँऽऽ.......

दक्षिणा—(कुर्सी की ओर बढ़ते हुए) अच्छा ! तो संकोच कर रहे हैं ? ठीक है, कर लीजिए ! तब तक मैं बैठ कर सुस्ता लूँ ।

एमन—संकोच की बात नहीं दक्षिणा जी ! ये........

दक्षिणा—सम्मान की बात है, है ना ? मैं आप से संकोच नहीं कर पाऊँगी ।

एमन—(रस लेते हुए) क्यों ?

दक्षिणा—अपना अपना मन है एमन बाबू ! मैं बाहर चलने के लिए अब इसलिए और नहीं कहूँगी, क्योंकि इस से आपको ठेस लगेगी कि मैं पे करूँ ।......हाँ शायद प्रकाशक महोदय ने आपको रायल्टी देना स्वीकार नहीं किया ?

एमन—यही तो बात है दक्षिणा जी! पहले कहता था कि उपन्यास प्रकाशित हुआ नहीं कि आधी रकम दे दी जायेगी, पर अब कहता है—साब, वार शुरू हो गयी।—कापी राइट पर ही माँगता है।

दक्षिणा—(**चिन्ता के साथ**) तो आपने क्या सोचा?

एमन—क्या सोचूँ, यही तो प्रश्न है।

दक्षिणा—न हो बेच ही दीजिए एमन बाबू! बेचना ही आज का युग-सत्य है। मैं कहती हूँ—देखना एक दिन अँग्रेज़ भी इस देश को काँग्रेस के हाथों बेच कर जायेंगे। वह स्वाधीनता थोड़े ही होगी। कापीराइट पर बिकी हुई पुस्तक की भाँति यह देश होगा।

एमन—लेकिन मैं सहमत नहीं इस कथन से।

दक्षिणा—(**हँसते हुए**) अरे तो क्या आप समझते हैं कि मैं स्वयं इस कथन से सहमत हूँ! जानते हैं, इस युग में कुछ भी कह दीजिए—साथ ही यह कह दीजिए कि मेरा ईश्वर मुझ से यही कहता है।

(**दोनों खिलखिला पड़ते हैं।**)

एमन—ज़्यादा अच्छा यह होगा कि चाय यहीं बनायी जाय। आप तब तक कुछ पढ़ें, मैं अभी बना लाता हूँ।

दक्षिणा—(**उसाँसते और उठते हुए**) स्त्री कहीं भी जाये एमन बाबू! चूल्हा उसका पिण्ड नहीं छोड़ सकता।

एमन—इस लिहाज़ से तो मुझे भी स्त्री होना चाहिए था। अध्यापक था तब भी और लेखक बना तब भी चूल्हा!

दक्षिणा—पुरुष, विवशता में ऐसा करता है। नारी का तो चूल्हा ही धर्म है एमन बाबू! चाहे वह ऋषियों का समाज हो चाहे साम्यवादियों का।

(**दोनों हँसते हैं। वह स्टोव जलाती है।**)

एमन—सुनिए दक्षिणा जी! सुना है शांति निकेतन में रविबाबू ने कला की उपयोगिता का अच्छा रूप खड़ा किया है।

दक्षिणा—(पानी रखते हुए) हमसे सुनी हुई बात हमीं से कही जा रही है ! (हँस देती है।) लेकिन याद रखिए मैं स्टोव के तानपूरे पर नहीं गाती !

एमन—तो ठीक है मैं ही कुछ पढ़ कर सुनाऊँ।

दक्षिणा—पुराना नहीं, आज जो लिख रहे थे वही।

एमन—(कागज़ उठाते हुए) हाँ वही...(पढ़ता है।) राजनीति सब कुछ कर सकती है—केवल सत्य की स्थापना नहीं कर सकती। राजनीति सब कुछ सहन कर सकती है, पर सत्यकथन को नहीं ! राजनीति की मानवता एवं सत्य—उसके झण्डों एवं राजकीय घोषणाओं तक सीमित रहते हैं—शेष में वह दिगम्बर, अघोरी, सर्वभक्षी है ! क्रांतिकारियों की आत्माहुति, रक्त-तर्पण को अँगुली कटाकर शहीद हुए राजनीतिज्ञों ने—निर्मम, अमानुषी, क्या क्या संज्ञाएँ नहीं दीं ? यतीन्द्र, आज़ाद और भगतसिंह के शहीद-सत्य को झुठलाने वाले कौन थे ? वे, जो मेंचेंस्टर के कपड़ों की दुकान में लाभ न देख कर आश्रम खोल बैठे थे। न रहे बंगलों में, जेल की 'ए' श्रेणी में ही रहे और बाहर निकलने पर ग्रन्थों के प्रणेता बन कर लाखों की रायल्टियाँ बनायीं ! झोंपड़ियों की भीड़ को पीछे धकेल कर बंगलों ने वायसराय-भवन को घेर लिया—झण्डे उतरे, झण्डे फहरा गये—कीर्तन की धुन पर क्रांति हो गयी ! इंकलाब का ताज़िया समय के करबला में ठंढा कर दिया गया। झोंपड़ियाँ, सड़कें और गलियाँ—गंजी और गमछे पहने, क्रांति के ऐतिहासिक रथ की विजय-यात्रा का जुलूस देखने खड़ी रह गयीं—समझ न सकीं कि यह रथ कब, किस मार्ग से निकल गया ? इन्हें क्या नहीं मालूम कि सौदा पटायी हुई क्रांतियाँ चोरी-चोरी ही सम्पन्न हुआ करती हैं। कमज़ के लिए म्यान नहीं होती, वह तो तलवार छिपाने के लिए आवश्यक है।

[**तब तक दक्षिणा चाय बना चुकी है। एक कप एमन की ओर बढ़ाती है, फिर—**]

दक्षिणा—(अपना कप हाथ में लिये कुर्सी पर बैठते हुए) तो आपने निश्चय कर लिया कि राजनीति से पलायन कर उसे लेखनी से कोसा जायेगा।

एमन—(चाय का घूँट पीते हुए।) पलायन नहीं, किन्तु स्वाधीनता के संघर्ष में मेरे योग की दिशा दूसरी होगी।

दक्षिणा—आप कोरे सैद्धान्तिक तथा आलोचक बने रहना चाहते हैं, विचार तो बीज हैं एमन बाबू! उन्हें मानस-मन में उगाना भी पड़ता है।

एमन—यही तो राजनीति का दम्भ है।

दक्षिणा—पार्टी जब आपको स्वीकारने को तैयार है, तब आप अलग द्वीपवत् क्यों रहना चाहते हैं। दूसरे सभी क्रांतिकारी पार्टी में शामिल हो गये हैं।

एमन—द्वीप की स्थिति में, सत्ता की प्रज्ञा होती है, अहं का कठोर होता है। जेल के समय ने मुझे तोड़ा नहीं, निर्मित किया है कि इस अनन्त प्रवाह में संतरण ही सत्य है और फिर किसी कूल लग कर उस काल-प्रवाह को गान और गूँज से आकार दो।

दक्षिणा—यही तो सुपरह्यूमेनिज़्म का रहस्यवादी रूप है। तब तो गाँधी जी से थोड़े दिनों में पटरी बैठ सकती है।

एमन—गांधी जी से बैठ जाती दक्षिणा जी, यदि वे राजनीतिज्ञ न होते तो!

(दोनों हँस पड़ते हैं।)

दक्षिणा—हीरेन आने वाला है आज शाम को आपसे मिलने। आपके वुड कट्स के बारे में।

एमन—हाँ, मैंने भी बागची कम्पनी में बातें की हैं। उनके यहाँ शांति-निकेतन की कई चीज़ें रहती हैं।

दक्षिणा—तो वो आपके वुडकट्स रखेंगे न?

एमन—वो ४० प्रतिशत माँगते हैं, वह भी गोदाम से बिक्री का। शो केस में रखने का वो अलग से किराया माँगते हैं।

दक्षिणा—(हँसते हुए) तो वो आपको ही क्यों नहीं माँग लेते?

एमन—माँग लें तो चिन्ता छूटे।

दक्षिणा—चिन्ता छूटी तो साहित्य गया समझें!

एमन—यह भी राजनीति का प्रचार है साहित्य के विरुद्ध। क्योंकि ये राजनीतिज्ञ जानते हैं कि दो-चार आठ बरस में कुर्सियाँ तो मिलेंगी ही और अगर ये साहित्यकार भी उनमें हिस्सा बँटाने आजायेंगे तो सब चौपट हो जायेगा इसलिए त्याग, तपस्या दुःख का भाग बेचारे साहित्यकारों के मत्थे मढ़ना चाहते हैं।

दक्षिणा—अच्छा साब! कौन मना करता है कि आप भी कुर्सी न लें, लेकिन जब आप कुर्सी पा जायें तो हम जैसों के लिए एकाध स्टूल का भी ध्यान रखिएगा। (**दोनों हँसते हैं।**) तो अब चलूँ एमन बाबू!

एमन—तो अब कब आइएगा?

दक्षिणा—(**किंचित नाट्य मुद्रा संगे**) इतिहास की प्रतीक्षा नहीं करनी होती!

एमन—(**उसी नाटकीयता से**) अच्छा! तो आप ही इतिहास हैं?

दक्षिणा—न सही इतिहास, उसकी भूमिका ही सही।

एमन—मैं भूमिका पढ़ने वाले ज्ञानियों में नहीं हूँ।

दक्षिणा—(**हँसते हुए निवेश**) तो आप इस युग के इन्टेलेक्च्यूअल नहीं हैं। पिछली किसी शताब्दी के पंडिताऊ लेखक हैं।

(**पटाक्षेप**)

द्वितीय दृश्य

[एमन का वही कमरा है। दस बजे हैं सवेरे के। बाहर से लौटता है एमन। उसके मुख पर प्रसन्नता की झलक है। हाथ में, उसका नव-प्रकाशित उपन्यास 'रक्त गाछ' है! धोती, कुरता, चादर में वह प्रवेश

करता है। उपन्यास की प्रति एक बार उलटता-पलटता है और चादर खूंटी पर टाँगते हुए गुनगुनाता है :—]

हमार हृदय प्रदेशे
अँकुराओ रक्त गाछ !
दिग्दिगन्त करो अग्निगान,
शैलबन्ध करि अंग भंग
मुक्ति-पर्ण ! जागो, जन्मो—
बन कालगात,
हमार इतिहास क्षेत्रे—
तर्पण पाओ रक्तगाछ—स्वागत ! स्वागत !

[ये पंक्तियाँ जैसे वह गुनगुना रहा है, और साथ ही चाय बनाने की तैयारी कर रहा है। तभी मकान मालिक सेठ छदम्मी मल की आवाज आती है—]

सेठ—एमन बाबू घर में ही हैं न ?

एमन—(आवाज़ सुनकर)—कौन ?

सेठ—(अपनी टिपीकल भूषा में प्रवेश करते हुए) अरे ? हमें नहीं पहचानते ? सेठ छदम्मी मल ! बाबूजी, जिस मकान में आप रहते हैं न, मैं ही उसका मालिक हूँ। हाँ, मुझे आप कैसे जान सकते हैं भला ? कभी किराया देने आते तो जानते ? किराये का एक पैसा दिया आज तक ? (घूरता है।) यह घर किरायेदार के लिए है दामाद के लिए नहीं।

एमन—कैसी बातें करते हैं सेठ साहब। मैं भला आपका दामाद......

सेठ—अरे दामाद ही नहीं बाप भी होते आप तो भी किराया नहीं छोड़ता, समझे ? पैसा गाँठ में नहीं और चले हैं बनने सुराजी !

एमन—मैं सुराजी ? किसने कहा आपसे ?

सेठ—किसी ने कहा हो हमसे—काले चोर ने कहा, अब बताइए ?—(**दर्शकों को सम्बोधन करते हुए**) अब बताइए इनमें और आपमें क्या फ़रक है साब ? साफ़ कपड़े आपने पहने हैं, साफ़ ये भी पहने हैं। जानते हैं, मकान लेने जब ये आये, तब आप ही पूछिए इनसे कि इन्होंने बताया था—१५ बरस जेल काट कर आये हैं ?

एमन—ज़रा सुनिए तो सेठ साब !

सेठ—अरे सेठ होगे तुम या ये लोग, यहाँ तो मकान है, बीवी है, दुकान है, गोदाम है। (**एमन की ओर मुँह करके**) मैं पूछता हूँ तुम्हें मकान किराये पर देना धरम है ? माँ, बाप, भाई, बहिन, बीवी, बच्चे—कोई हैं भी तुम्हारे ? मान लो सब को हैज़ा हो गया, कॉलरा हो गया—मगर नौकरी ? नौकरी को क्या हुआ ? कहाँ है तुम्हारी नौकरी ? काम क्या करेंगे आप ? सरकार के ख़जाने पर डाका डालेंगे और रहेंगे छदम्मी मल के मकान में—है न ? सरकार के वार-फ़ंड में चंदा दो, सुराजियों को मुफ़्त में मकान किराये पर दो—दोनों ने उल्लू का समझ रक्खा है। सरकार के चक्कर काटो तो वो राव राजा की पदवी दे और इनके (**एमन की ओर हाथ करके**) चक्कर काटो तो ये किराया दें—बोलो अब, डाढ़ी के बाल तक सफ़ेद होने आये और गरीब छदम्मी मल का पैसा मारते शरम नहीं आती ?

एमन—(**संयत क्रोध से**) देखिए सेठ साहब ! आपको किराया ही चाहिए न ?

सेठ—(**बड़े ही नाटकीय ढंग से**) नहीं पिता जी ! चंदा माँगने आया हूँ।

एमन—(**संयत क्रोध से**) मिल जायेगा किराया।

सेठ—अरे मिल नहीं जायेगा, अभी लेके जाऊँगा, नहीं तो बोरिया-बिस्तर लेकर...

[**ख़ाली करने के संकेत में चुटकी बजाता है। और चारपाई पर ज़ोर से बैठता है। चारपाई की रस्सी टूट जाती है। सेठ—'मार्यो रे बाप' कह कर चिल्ला उठता है। 'रक्तगाछ' की प्रति का रेपर फट जाता है।**]

एमन—सारी किताब नयी की नयी ख़राब कर दी।

[एमन सेठ को पकड़ कर निकालता है और उपन्यास की प्रति को झटकारता है ।]

सेठ—(कपड़े ठीक करते हुए) किताब ? तुम्हारी है ? तुमने छपायी ? अरे छापने को पैसा था और किराया देने को पैसा नहीं था ?

एमन—सुनिए, इस किताब के प्रकाशक—मतलब मालिक जिसने छापा है वे मुझे दो-चार दिन में ही पैसा देंगे तब.......

सेठ—तब की ऐसी की तैसी !

[और किताब एमन के हाथों से छीनकर ज़मीन पर दे मारता है। तभी दक्षिणा और पार्टी सेक्रेटरी माणिक मुखर्जी प्रवेश करते हैं। दक्षिणा की वही भूषा है। माणिक धोती, कुरता और विद्यासागरी पहने है।]

दक्षिणा—(आश्चर्य से) यह क्या हो रहा है एमन बाबू ?

(सेठ तब तक दक्षिणा को घूरता है और फिर एक दम)

सेठ—अच्छा, तो यहाँ लड़कियाँ भी लायी जाती हैं ?

एमन—(क्रोध से) शटअप !

(सब अवाक रह जाते हैं।)

सेठ—(उसी ताव से) तो सुन लो एमन बाबू ! यह मेरा घर है रण्डीखाना...

एमन—(क्रोध से) तो तुम चुप नहीं रहोगे ?

माणिक—सेठ साहब ! आप क्या कह रहे हैं, कुछ मालूम है !

सेठ—नहीं, छदम्मी मल तो गधा है। (माणिक से) तुम कौन हो जी बीच में बोलने वाले ? आठ महीने का किराया २५०) तुम दोगे ? (एमन के) सुनिए २५०) दे कर मकान खाली कर दो, आज और अभी, नहीं तो पुलिस को बुलाता हूँ।

दक्षिणा—व्हाट इज द मैटर एमन बाबू ?

एमन—आइ शेल टेल यू आफ़्टर वर्ड्स........

सेठ—अरे, व्हाट आइ शेल टेल यू आफ्टरवर्ड्स—मेम साब ! किराया चाहिए, किराया (**रुपया बजाने का संकेत करता है ।**) किराया !

माणिक—(**रोष से**) किराया ही तो लीजिएगा या इज्ज़त भी लीजिएगा ?

सेठ—(**दर्शकों से**) देखिए साब ! भला इन लोगों की भी कोई इज्ज़त है ?

(**'ही...ही...ही'...हँसता है ।**)

दक्षिणा—(**माणिक से**) टेल हिम देट ही विल गेट इट टुमारो ।

सेठ—(**दक्षिणा को देखते हुए**) अच्छा तो ये बात है, तभी !

माणिक—अच्छा तो अब आप इज्ज़त से चले जाइए ।

सेठ—अरे हाँ, हाँ, जाते हैं । यहां तो पैसा होना चाहिए चाहे जूड़ा दे या डाढ़ी !

(**विकृत हँसी के साथ निवेश**)

दक्षिणा—(**क्रोध से**) स्वाइन ! पैसा ! पैसा ! पैसा !

माणिक—नो यूज़ शाउटिंग ओवर हिम शेष दी ! रक्त चाटते सिंह की और सोते हुए आदमी की कथा नहीं याद है ? यू काँट बी ऐंग्री, बट टू शूट द ब्लड-सकर !!

एमन—नहीं, शूट कर देने से व्यक्ति न रहेगा, परन्तु स्वभाव भी न रहेगा इसका क्या प्रमाण ?

(**दक्षिणा और माणिक अवाक से एमन को देखने लगते हैं ।**)

माणिक—शेष दी ! तुम भी कैसे हो कि अभी तक परिचय भी नहीं कराया ।

दक्षिणा—(**किंचित दुखी मन से**) भला इस परिचय से बढ़कर हम सबका परिचय क्या हो सकता है । नाम विभिन्न भले ही हों, फिर भी एमन बाबू, ये माणिक मुखर्जी पार्टी सेक्रेटरी हैं और वैसे मेरे ममेरे भाई भी हैं । और माणिक इनका परिचय......

एमन—(**ईषत हास्य**) निरावर्णता का कोई भी परिचय नहीं कराता माणिक बाबू ?

माणिक—यह तो मेरा सौभाग्य है एमन बाबू ! एक बात कह दूँ कि मैं शेष दी

से भी छोटा हूँ, इसलिए मेरे लिए माणिक् बाबू की व्यावहारिकता रहने ही दें।

एमन—चलो, व्यावहारिकता ऐसी चीज़ भी नहीं कि उसे सहेज कर ज्यादा दिन रखा जाये।

दक्षिणा—(**सहज भाव से**) अभी से कैसे छुट्टी मिली। इस लंका काण्ड के उपरान्त सीता जी की रसोई की भांति आपकी चाय (**सब हँसते हैं।**) आप की चाय भी अजीब आफ़त है एमन बाबू।

एमन—अभी तो आप किसी की पत्नी बनी नहीं तब यह हाल है, बनने पर तो......

दक्षिणा—(**कुछ आक्रोश, कुछ खोये रूप में**) क्या कहा आपने ? पत्नी !

एमन—(**हतप्रभ होकर**) मुझ से शायद कुछ भूल हुई...क्षमा......

माणिक—(**दक्षिणा को कंधे से पकड़े हुए**) नहीं वैसा कुछ नहीं...शेष दी, दी...की होलो ?

[**दक्षिणा क्षण भर में ही स्वस्थ हो जाती है। चाय बनाती है। सब अबोले ही रहते हैं। थोड़ी देर बाद चाय पर :**]

माणिक—तो एमन दा ! क्या लेखक ही बने रहने का विचार है ?

एमन—बाध्यतावश तो नहीं, परन्तु यह तो मेरा धर्म है।

दक्षिणा—किन्तु क्रांतिकारी का धर्म क्या......

एमन—गलत न लें दक्षिणा जी। जब राजनीति को स्वीकारा है तब लेखक धर्म की आड़ लेकर उससे विमुख नहीं हूँगा।

माणिक—तब तो आप आसानी से पार्टी साप्ताहिक का सम्पादन स्वीकार लेंगे।

दक्षिणा—मैं समझती हूँ कि यह आइडिया बहुत अच्छा है।

एमन—मेरे विचार और संकल्प में विभिन्नता न मानें, किन्तु चाहूँगा कि इस पर सोच कर ही निर्णय करूँ।

दक्षिणा—(**एमन की आँखों में आँखें डाल कर**) क्या निर्णय ? यही न अब

आगे कैसे क्या होगा...सो नहीं होने का। मैंने कुछ निर्णय ले लिये हैं। कल वह सेठ का बच्चा किराया ले जायेगा और आपको इसी समय यहाँ से चलना होगा।

एमन—इसी समय? पर कहाँ? क्यों?

दक्षिणा—(हँसते हुए) जब पुलिस पकड़ने आती है तब क्या आप उस से भी ऐसे प्रश्न करते हैं? और क्या वह उत्तर देती है?

एमन—किन्तु यह कैसे सम्भव है?

दक्षिणा—यह ऐसे सम्भव है (उठती है और रेक पर किताबें समेटते हुए) करने वाले के लिए कुछ असम्भव नहीं...द वर्ड इम्पॉसीबल इज़ फ़ाउँड इन द डिक्शनरी आफ़ राइटर्स एज़ वेल एज़......

(माणिक और दक्षिणा हँस देते हैं।)

एमन—पर सुनिए तो, भला यह क्या बात हुई...कि......

दक्षिणा—(मुँह बनाते हुए और कमर पर दोनों हाथ रखते हुए) कि एक बार कहा और नेता जी चल पड़े। जब तक दस बीस आदमी चिरौरी न करें, फूल मालाएँ न पहनायें, तब तक भला नेता जी टस से मस कैसे हों?.... जाओ माणिक! सवारी का प्रबन्ध करो। हम लोग तो प्रोल्तारी ठहरे, लेखक लोग तो बुर्जुआ होते हैं।

(हँसते हुए माणिक जाता है।)

एमन—दक्षिणा जी।

दक्षिणा—देखिए मुझे आपका यह 'जी' नहीं चाहिए। और सुनिए, माणिक मुझ से छोटा है। उसके सामने बहुत आग्रह करने से तो रही। चाहोगे, तो मुझे वह भी करना ही पड़ेगा, पर वह शोभन नहीं होगा—और जब आदमी की अपनी बुद्धि काम न कर रही हो तो शास्त्रों में कहा है कि—हे अबुद्धियो! महाजनो येन गतः स पन्थाः!

[एमन हतप्रभ हो कंधे हिलाता है। दक्षिणा सामान बटोरने लगती है।]

पटाक्षेप

तृतीय दृश्य

[सायंकाल का समय है। स्थान पार्टी आफ़िस का एक कमरा है। दीवार पर मार्क्स एंगेल्स, लेनिन और स्टालिन के चित्र हैं। दीवार के बीच में हँसिया-हथौड़ा बना है। दाहिने हाथ के कोने में एक टेबल पर टाइपराइटर की पुरानी मशीन है, जिस पर महिला कामरेड कान्ता एक हाथ से काम कर रही है और दूसरे हाथ से रह रह कर सिगरेट पीती जाती है। यौवन या आनन्द नामक कोई चिन्ह उसके मुख पर नहीं है। उसकी बगल की कुर्सी पर शेरवानी तथा अलीगढ़ी पायजामा पहने एक कामरेड है। बिना धुले तथा तैल लगे बालों का वह काला सा कामरेड अफ़ज़ल है। वह उर्दू का कवि है। बहुत ही दुबला-पतला युवक है बीड़ी पी रहा है। साथ ही कागज पर कुछ लिख रहा है। बाँयें हाथ पर कामरेड रनजीत (जो कि रेलवे में सिगनेलर है, इसलिए उसे 'रनजीत द सिगनेलर' कहते हैं सब) दो तीन रेल्वे मज़दूरों को मुट्ठियाँ ऊपर उठा-उठा कर ज़ोर-ज़ोर से समझा रहा है। ये लोग नीली कमीज़ें पहने हैं।

सामने मंच पर माणिक, दक्षिणा, विभूति भूषण बैठे हैं। विभूति एमन की उम्र का कामरेड है, बाल खिचड़ी हैं। वह यू० पी० के पूर्वी जिले का कामरेड है। उसकी नाक पकौड़ी जैसी है। उसके हाथों में विदेशी अखबार है, जिसे वह ध्यान से पढ़ रहा है। बीच-बीच में दाँयें, बाँयें बैठे माणिक और दक्षिणा से कुछ कहता जाता है।]

विभूतिभूषण—पाँच तो हो गया होगा माणिक। अभी कामरेड एमन और रहमान नहीं आये ?

अफ़ज़ल—(दूर से ही) कामरेड अहमद ने फ़रमाया था कि वे छः तक आयेंगे।

विभूतिभूषण—मगर जनाब ! आप वहाँ क्या कर रहे हैं ? आपके अख़बार बेचने का कोटा कैसे पूरा होगा ? आज भी अख़बार बेचने नहीं गये।

अफ़ज़ल—कामरेड इस मुल्क में मरेठी और हिन्दोस्तानी ही चलती है। उर्दू समझने वाला यहाँ कौन है ?

विभूतिभूषण—देट्स वेरी बेड कामरेड !....यस कामरेड माणिक ! वी शुड इन्क्लूड दिस न्यूज इन अवर नेक्स्ट इश्यू।

(और हाथ के विदेशी अख़बार में संकेत करता है।)

माणिक—यस कामरेड ! (आवाज़ देते हुए) कामरेड कान्ता !

कान्ता—(टाइपराइटर पर काम करते हुए) वेट ए बिट् !!

विभूतिभूषण—(दक्षिणा से) इसका तर्जुमा होकर हिन्दोस्तानी परचे में भी जाये। और भाई ज़रा एमन साब को ताकीद कर दो कि आसान ज़ुबान लिखें। इस कदर संसकीरत लिखते हैं कि सख्त कोफ़्त होती है।

दक्षिणा—मगर कामरेड ! लैंग्वेज वाले प्रश्न को, मैं समझती हूँ, हमें नहीं छूना चाहिए।

अफ़ज़ल—कामरेड देकीना (दक्षिणा को ये जनाब इसी नाम से पुकारते हैं) मसलों को नज़र अन्दाज़ करते जाना निहायत ग़ैर कम्युनिस्टी रवैया है। ज़ुबान ज़मीं की रूह होती है, उस पर आप यह पण्डों और बिरहमनों की ज़ुबान कैसे लाद सकते हैं ?

माणिक—कामरेड ! इस समय न तो मौका ही है और न किसी ने आपसे राय ही माँगी कि कौन सी ज़ुबान क्या है। यह बिलकुल ग़लत ढंग है बात करने का।

अफ़जल—जनाब कामरेड भूषन से मैं कई दिनों से गुज़ारिश करना चाहता था कि जब पार्टी ने उन्हें अपने सियासी रिसालों का अमलदार बनाया है तो वे देखें कि जब से ये हिन्दी कामरेड एमन साब तशरीफ़ लाये हैं, तब से हिन्दोस्तानी का परचा, रोज़-ब-रोज़ कैसी नाक़ाबिले-बरदाश्त ज़ुबान का इस्तेमाल करता जा रहा है। पहले के एडीटर साहब किस कदर तरक्कीपसन्द ज़ुबान लिखते थे। यह पार्टी-पालीसी की सरीहन तौहीन है। मैं आप हज़रात से दरख़्वास्त करता हूँ कि कम्युनिस्ट के नाते आप इसे रोकें।

[तभी एमन प्रवेश करते हैं उनके साथ कामरेड अहमद हैं। अहमद सुन्दर व्यक्ति हैं! यहूदियों की सी लम्बी नाक, साफ रंग प्रभाव डालता है। लम्बे कद के सौम्य व्यक्ति हैं। अलीगढ़ी पायजामा, कुरता और कंधे पर चादर योंही डाल रखी है। अफ़जल की मुट्ठियाँ कसे भाषण देता हुआ देख कर कुछ मुँह बनाते हुए—]

अहमद—क्या बात है शायर मियाँ! किस चीज़ की तनक़ीद पर कमर बाँधे हो?

अफ़जल—जनाब अहमद साब! यह हिन्दोस्तानी रिसाले की ज़ुबान पर कामरेड देकीना ने कहा है कि ज़ुबान के मसले को नहीं छूना चाहिए।

अहमद—तो क्या कुफ्र हुआ। कोई ग़लत बात तो नहीं कही जो आप इस कदर थियेटराना अन्दाज़ के साथ मैदान-ए-जंग में ख़म ठोंक कर उतर आये। जाओ अपना काम करो मियाँ! हरदम तलवार सान पर चढ़ाये नहीं घूमा करते।

अफ़जल—(हतप्रभ होकर) ठीक है, बैठ जाऊँगा, मगर यह बुर्जुआ तरीका है! ज़ुबान के मामले में मैं आपसे मुत्तफ़िक नहीं हो सकता अहमद साब! कम्यूनिज़्म नये तमद्दुन, नयी ज़ुबान के पाये पर ही खड़ा होगा।

एमन—(संयत भाव से) क्या बात है अफ़ज़ल साब!

अहमद—(कुछ संयत भाव के साथ एमन से) आप रुकें (अफ़ज़ल से)

देखिए अफ़ज़ल मियाँ ! अगर आप एमन साहब की ज़ुबान पर लाल-पीले होते हैं तो बताइए कि आप या मैं जिस ज़ुबान का इस्तेमाल कर रहे हैं—क्या वह हिन्दोस्तानी है ? अवाम की ज़ुबान है ?

अफ़ज़ल—बेशक, बुर्जुआ गाँधी तक मानता है।

अहमद—(क्रोध से किन्तु सीधे ढंग से) कायदे से बातें करना सीखिए कामरेड। गाँधी चाहे कुछ भी हों, वे पूरी इंसानियत के रहनुमा हैं। यह निहायत ओछा तरीका है कि जिसे चाहा बुर्जुआ कह दिया। आप और मैं उर्दू बोलते हैं। जिस तरह उर्दू एक ज़ुबान है, हिन्दी भी है। सबको अपनी ज़ुबानें काम में लाने का बराबरी का हक है। पार्टी जो हिन्दोस्तान चाहती है। वह अभी दूर की बात है। दो ज़ुबानें मिलें, लेकिन यह काम अवाम का है। वही नयी ज़ुबान पैदा करेंगे आप और हम नहीं, पार्टी भी यह हक नहीं रखती।

अफ़ज़ल—आपका नज़रिया बहस-तलब है, क्योंकि हिन्दी ज़ुबान न तो सूब-ए-हिन्द, न बिहार शरीफ़, कहीं भी नहीं बोली जाती। पार्टी के सैकड़ों फ़नकार और शायर जो हिन्दोस्तानी लिखते हैं, क्या वही ज़ुबान एमन साब अपने रिसाले में लिखते हैं ?

अहमद—जनाब अफ़ज़ल साब ! मैं इन पार्टी फ़नकारों और शायरों की तौहीन नहीं कर रहा, मगर हिन्दी अदब में उनकी चीज़ों के मानी बहुत कम हैं। जिन सूबों के नाम गिनाये हैं, वहाँ संस्कृत से निकली बोलियाँ बोली जाती हैं—उर्दू नहीं।

विभूतिभूषण—मैं समझता हूँ कामरेड अहमद कि यह बहस क़यामत के दिन भी ख़त्म नहीं होगी। कामरेड कान्ता !

कान्ता—(जो कि बड़ी देर से खड़ी सब सुन रही थी) यस कामरेड, मुझे कामरेड माणिक ने सब बता दिया है।

विभूतिभूषण—एमन बाबू ! आप भी इसका तर्जुमा....(**तनिक हँसते हुए**)....
नहीं अनुवाद दे दीजिएगा ।

एमन—मुझे किसी भाषा से द्वेष नहीं, बशर्तेकि वह किसी दूसरे का घर न छीने ।

विभूतिभूषण—(**हँसते हुए**) हिन्दी भी क्या मुसीबत है ?

एमन—जनाब, मुसीबतों से डरिएगा तो फिर क्रांति करवा चुके । क्रांति तो सब से बड़ी मुसीबत है ।

अहमद—नहीं हमारा नज़रिया ही ग़लत है । मजहब, भाषा और ट्रेडीशन ये सब चीज़ें ऐसी हैं कि कोई भी सियासत इन पर जब भी हाथ डालेगी, वह ख़त्म हो जायेगी ।

विभूतिभूषण—अच्छा, तो मैं समझता हूँ कि जिस बात के लिए हमारी मीटिंग होनी है उसकी चर्चा शुरू कर दें । माणिक ! कामरेड रनजीत द सिगनलर से कह दें कि वे ज़रा धीरे समझायें गर्म होकर नहीं ।

दक्षिणा—कह दो ठण्डे और धीमे बोलने से भी क्रांति आजायेगी । क्रांति, सिगनल नहीं है ।

(**सब हँसते हैं ।**)

अहमद—(**मधुर ढंग से**) आफ्टर आल दि नाइटिंगेल आफ़ रिवोल्यूशन सैंग !

(**सब फिर हँसते हैं ।**)

विभूतिभूषण—(**मधुर ढंग से**) कामरेड्स ! पी० बी० और सी० सी० का ख़याल है कि हमें अपनी पालीसी में जल्द ही चेंज लाना होगा । काँग्रेस मिनिस्ट्री ने वार इश्यू पर जो रिज़ाइन कर दिया है, इससे उन्हें मोमेंटम मिला है । आज तो वे भी हमारी ही तरह वार के ख़िलाफ़ हैं, मगर मान लो कि हिटलर रूस पर हमला कर देता है तो डेफ़ीनिट है कि हमें वार को

डिफरेंट एंगल से देखना होगा। आज की इम्पीरियलिस्ट वार तब शायद है पीपुल्सवार कहलाये।

एमन—मगर कामरेड! यह पीपुल्स वार है, इसे जनता को कैसे समझाया जायेगा?

विभूतिभूषण—आपका प्वाइंट ठीक है। लेकिन जनता से पहले हमें अपने कामरेड्स एण्ड केडर्स को समझाना होगा कि चूँकि हम इंटरनेशनल आरगीनिज़ेशन हैं, इसलिए रूस पर हमले से वार की शक्ल और परपज़ ही बदल जाते हैं। नेशनिलिस्टों को तब भी यह वार इम्पीरियलिस्ट ही लग सकती है, पर हम ऐसा नहीं कर सकते। रूस दुनिया भर के मेहनतकशों की उम्मीद है, वह उनकी रहनुमाई करता है—उससे जो भी जंग होगी, वह भी पीपुल्सवार ही होगी।

अहमद—कामरेड्स। मैंने यह बात सी० सी० के सामने भी रखी थी, कामरेड भूषण जानते हैं, मैं यह समझता हूँ कि बात उसूलन ठीक होने पर भी नेशनल लेवल पर मार खा जायेगी। हमारी नेशनलिस्ट पार्टियाँ जनता को हमसे अलग ले जाने में शायद कामयाब हो जायें। काँग्रेस तथा गांधी का इन्फ्लूएन्स मुल्क पर गहरा है। आज के हालात में वे किसी स्ट्रांग पालिसी को शायद शुरू कर दें, क्योंकि लोगों के दिलों में शोले हैं—उस हालत में हमारा सियासी रुतबा ख़तरे में पड़ सकता है।

विभूतिभूषण—कामरेड! हिस्टरी इज़ सम टाइम्स ए फ़िक्स, देअर रिमेन्स नो आलटरनेटिव।

एमन—अंतरिक्ष को समेटने की कामना में यह न हो कि पैरों नीचे की धरती भी विद्रोह कर उठे।

दक्षिणा—इस तरह के डाइलेमाज़ ही तो महान होते हैं। देशों और आँदोलनों को इन ऐतिहासिक चक्रों में से निकाल ले जाने वाला ही युग-पुरुष होता है।

एमन—कई बार ऐसा भी तो होता है कि डाइलेमाज़ पहले निकल जाते हैं और युगपुरुष बाद में आते रहते हैं।

(एमन और दक्षिणा अपने व्यंगों पर खिलखिला पड़ते हैं।)

विभूतिभूषण—(एमन और दक्षिणा से) कामरेड्स यू आर अंडर माइनिंग दि पावर एण्ड प्रेस्टिज विच अवर पार्टी कमाँड्स।

एमन—(तपाक से) नाट-एट-आल अडंरमाइनिंग कामरेड! आन दि अदर हेंड आइ विश सकसेस फार दि पीपुल्स फोर्सेस हीयर, देयर एण्ड एवरीवेयर।

(पटाक्षेप)

चतुर्थ दृश्य

[कुछ कालोपरान्त। साँझ का समय। स्थान वही पार्टी आफ़िस। एमन एक तकिये के सहारे बैठा हुआ लिख रहा है। बात सन् १९४२ के आंदोलन की समझी जाय। वेष में विशेष परिवर्तन नहीं—न कक्ष में ही। तभी दक्षिणा काली साड़ी, काला ब्लाउज़ पहने प्रवेश करती है। वह कंधे का झोला थकान के ढंग पर ज़ोर से एमन के पास पटकती है।

एमन—(नाटकीय ढंग से उसे नीचे से ऊपर तक देख कर, फिर सिर झुका कर) सो टू डे लेडी इन ब्लेक ?

दक्षिणा—यहाँ तो मरी-खपी आ रही हूँ और आपको मज़ाक सूझ रहा है। दो घंटे हो गये सड़कों पर चिल्लाते क्या मजाल जो एक भी प्रति बिके।

एमन—(मज़ाक करते हुए) तुम्हें देख कर भी नहीं।

दक्षिणा—देखो जी, हर घड़ी मज़ाक अच्छा नहीं।

एमन—अगर देश की इच्छाओं के विपरीत नीति अपनायी जायेगी तो वे तुम्हारे पत्र क्यों खरीदेंगे ? सीधी-सी बात है ।

दक्षिणा—रूस के एजेण्ट, रूस के पिठ्ठू—सुनते-सुनते तो कान तक पक गये ।

एमन—(बढ़ते हुए) लाओ, देखूँ तो तुम्हारा कान ?

दक्षिणा—आजकल आपको हो क्या गया है ?

एमन—अरे तो बिगड़ती क्यों हो ? एक तुम ही तो हो जिससे मज़ाक भी कर लेता हूँ ।

दक्षिणा—(चिढ़ाते हुए) अच्छा जी, शायद बहुत ग़लतफ़हमी हो गयी है लेखक महोदय को ।

एमन—जब कोई ऐसी भूषा पहनेगा तो ग़लतफ़हमी होना स्वाभाविक ही है ।

दक्षिणा—(अपनी भूषा को देखते हुए) क्यों ? क्या गलत है इसमें ? और किसी कामरेड ने तो कहा नहीं ?

एमन—खूब चलायी तुमने भी इन कामरेडों की जिन्हें भारत या यहाँ की भाषा से ही चिढ़ है । अपनी पार्टी का नाम तक अँग्रेज़ी में ।

दक्षिणा—पार्टी आफ़िस में बैठ कर पार्टी की ही निन्दा ?

एमन—यह तो सेल्फ क्रिटिसिज़्म है । नेहरू जी इसी को 'कंसट्रकटिव क्रिटिसिज़्म' कहते हैं । (हँसता है) हाँ तो जानती हो, प्राचीनकाल में संध्या बेला यदि कोई नारी नीले या काले वस्त्रों में घर से बाहर जाती थी तो उसका अर्थ होता था—अभिसार !

दक्षिणा—(नाटकीय क्रोध से) तो आपका अर्थ है कि मैं आपके पास अभिसार के लिए आयी हूँ ?

एमन—ऐसे कुछ बुरा भी नहीं होगा । सच कहना क्या मैं अब इस योग्य नहीं रहा ?

(हँस देता है । दक्षिणा भी हँस देती है ।)

दक्षिणा—जाइए ज़रा आइने में देख आइए । दस बरस पहले शायद देखी

होगी शक्ल अपनी ! आधे बाल सफ़ेद हो गये और अभिसार की सूझी है ।

एमन—अभिसार आयु पर निर्भर नहीं करता देवी जी ! और सही बात बताऊँ कि क्या करूँ दक्षिणा, जिन दिनों लोग ऐसा सब कुछ करते हैं न, तब यह जन बिचारा जेल में चक्कियाँ पीसता था ।

दक्षिणा—अच्छा भाई, आप अपनी जानें, मैं अभिसार करने नहीं आयी थी । थक गयी थी, सोचा कि चलूँ आपसे कहूँगी कि बीच पर घूमने चला जाये ।

एमन—तो मैं ने क्या गलत कहा था, बताओ ?

दक्षिणा—(बनते हुए) कौन सी बात......

एमन—अरे यही समुद्र-तट पर घूमना वगैरा...

(शरारत से हँस देता है ।)

दक्षिणा—बड़े दुष्ट हो जी तुम....(जीभ काट लेती है) नहीं आप ।

एमन—अब आप-वाप नहीं, तुम ही ठीक है ।

दक्षिणा—पेट में इतनी लम्बी डाढ़ी छिपाये थे, यह नहीं मालूम था ।

एमन—किसी ने मालूम ही कब किया ? आज ही तो तुम मालूम करने आयी थीं, मालूम हो गया । और डाढ़ी भी तो नाई ही को मालूम पड़ती है ।

दक्षिणा—(हँसी, खीझ, लज्जा आदि के साथ, दोनों हाथ जोड़ती है ।) अच्छा बाबा । तुम्हारे हाथ जोड़ती हूँ । पहले अभिसारिका कहा, फिर नाई कहा और पता नहीं अब क्या कह दो !

एमन—(हँसते हुए) सुनो तो कह दूँ (शरारत से) क्यों ? कह दूँ ?

दक्षिणा—चुप !

एमन—ओ० के० तो फिर काम ही किया जाय !

[और नाटकीय ढंग से लिखने के लिए झुक जाता है । दक्षिणा भी पास बैठ जाती है और उसके बालों में अँगुलियाँ चलाने लगती है ।]

दक्षिणा—सुनो, बहुत थक गये होगे, इतना तो लिख डाला ।

[और आसपास पड़े कागज़ों को देखने लगती है। दोनों एक दूसरे को क्षण भर देखते हैं—उपरान्त—]

एमन—दक्षिणा !

(और वह दक्षिणा का हाथ दाब लेता है।)

दक्षिणा—(लज्जा संगे) छोड़ो कोई देख लेगा।

(और वह हाथ छुड़ाते हुए भी नहीं छुड़ाती।)

एमन—इस संवेदना का कोई अर्थ है भी दक्षिणा !

दक्षिणा—(उसी आत्मस्थ भाव संगे) होगा एमन ! जान कर दुख ही होता है।

एमन—सह-अनुभूति दो दुखों की सेतु है।

दक्षिणा—(एक दम हाथ छुड़ा कर अलग होते हुए) नहीं एमन ! नहीं...इस प्रवाह को मत बाँधो, न बाँधो। प्रवाह के हृदय प्रदेश में पूर्व-सेतु के खण्ड स्नात हैं।......उन्हें मैं प्रवाहित नहीं कर सकी हूँ, नहीं सकी हूँ एमन !

[फूट कर रो पड़ती है। एमन कुछ क्षण हतप्रभ रह जाता है, उठता है और रोती हुई दक्षिणा के सिर पर हाथ फेरता है।]

एमन—विगत बीत जाने पर स्थिति अशेष हो जाती है दक्षिणा ! खण्डित लकड़ियों के यूथ से ही समिधा एकत्रित हुई होती है। तब हम अपनी प्रतिगतियों में सुलग उठते हैं और वह यज्ञ कहलाता है। अपने को यों न करो। हमने जो सिद्धान्त वरा है वह सर्वश्रेष्ठ का है।

दक्षिणा—मैंने समझा था कि मैं सर्वश्रेष्ठी हो गयी, व्यक्ति से त्राण मिला, किन्तु आज तुम मेरी प्रतिगति में सुलग उठे......

एमन—व्यक्तियों का योग होना होगा, जबकि दूसरे साथी इसे केवल गुणनफल मानते हैं। यह मिथ्या है दक्षिणा ! जिस दिन ऐसा हो जायेगा उस दिन क्रांति के किये-धरे पर पानी फिर जायेगा।

दक्षिणा—साम्यवाद की यह व्याख्या तो लेखक की व्याख्या है।

एमन—लेखक की न कह कर, कहो कि संघश्रेष्ठ की यह व्याख्या भावना की है। जब कि नेता लोग दुनिया भर की सोचें लेंगे, किन्तु मनुष्य का संवदनशील मन क्या कहता है, इसे नहीं पकड़ते।

दक्षिणा—तुम क्या समझते हो कि दूसरे कामरेड्स तुमसे सहमत होंगे?

एमन—सहमत हो जाने पर ही सत्य की पुष्टि होती हो, यह मैं नहीं स्वीकारता।

दक्षिणा—(हल्के हँसते हुए एवं आत्मीय ढंग से) मैं यह नहीं स्वीकारता, मैं वह नहीं स्वीकारता—किसी को स्वीकारोगे भी जीवन में या कि अस्वीकारते ही रहोगे?

(अतृप्त भाव से एमन की ओर देखती है।)

एमन—मैं सारी बातें स्वीकारता हूँ, किन्तु विभिन्न स्थिति से।

दक्षिणा—(बनाते हुए) अपनी डेढ़ ईंट की मस्जिद अवश्य होगी, क्यों?

एमन—(हँसते हुए) तो तुम मेरी आधी ईंट हो, मानती हो?

दक्षिणा—(हँसते हुए) कुछ भी हो अपने साथ मुझे भी सानोगे, है न! (गम्भीर होकर) देखो जी, किसी दूसरे की पत्नी के साथ......

एमन—(आश्चर्य एवं पीड़ा के साथ) क्या? तुम किसी की पत्नी भी हो?

दक्षिणा—उस दिन भी तुमने यही पीड़ा दी थी (वह प्रत्यंचवत खड़ी हो जाती है) सुन लो एमन! मैं परित्यक्ता हूँ!

एमन—(दक्षिणा की दोनों बाँहें झकझोरते हुए) झूठ है यह। अपने को कष्ट देना ही तुम्हें सुहाता है।

दक्षिणा—(पीड़ित हास्य एवं गम्भीरता संगे) दुखी हम हो लें, किन्तु भोगना होता ही है।

(वह अपने विगत में खो जाती है।)

एमन—तुम आराम करो दक्षिणा!

दक्षिणा—(शून्य में देखते हुए) हाँ!

एमन—रुको, मैं प्रबन्ध करता हूँ।

[वह तेज़ी से दाहिने हाथ से जाता है, खाट लेकर लौटता है। एक बिस्तरा बिछा देता है। दक्षिणा लेट जाती है और तब वह खाट के पास कुर्सी डाल कर बैठ जाता है। इस बीच कोने की टेबल पर का टेबल लेम्प जला देता है। दक्षिणा आँखें मूंदे पड़ी है।—]

एमन—प्रत्येक को निकट से देख पाना, कोलम्बस की खोज की भाँति है दक्षिणा !

दक्षिणा—(पहले तो आँखें खोलती है, फिर उठ कर अधलेटी हो अपने दोनों हाथों से एमन के दोनों हाथ सीने पर रख लेती है।) तो मेरे बारे में तुमने खोज की, क्यों कोलम्बस ?

एमन—(झेंप जाता है) आई मीन......

दक्षिणा—(तपाक से) 'देट यू आर आन यूवर वे टू द न्यू वर्ल्ड....(हँसती है) व्हाट ए वायेज !!

(और तन्मय दृष्टि से एमन को देखती है।)

एमन—देखो छलो नहीं यों।

दक्षिणा—किसे ? तुम्हें, और छलूँगी ?—(गम्भीर हो कर) तुम लोगों को विवश करना ही आता है, क्यों ? (फिर कहीं दूर देखते हुए—तकिये पर सिर टिकाते हुए) कदाचित लेने में निर्ममता आवश्यक है।

एमन—मेरा तात्पर्य था......

दक्षिणा—(सहसा उद्दाम, संयत, प्रज्ञाहीन, वेगवान हो उठती है) लो, इसे स्वीकारो एमन ! यदि मेरी अपात्रता तुममें के श्रेष्ठत्व या संघ के महत्त्व को जन्म दे सकती है तो इसे ले लो, ले लो ! (अत्यन्त संयत स्वर में) ढाका के सूपरीनटेंडेंट की पत्नी दक्षिणा गुहा का किसी भी रूपे यदि महत्व हो, तो उसे भी धारण कर लूँगी। बिना धारण किये नारी पूर्ण नहीं, उपेक्षिता रहती है। एमन ! जो पुरस्कार पतिदेव ने उदारता के साथ अपनी पत्नी के तन पर अलंकृत किये—उन्हें देखोगे ?—लो—देखो (और वह

पीठ पर का ब्लाउज ऊँचा करके दिखाती है।)—स्वीकारो एमन ! मेरी अपात्रता के साथ इन्हें भी !...ये पुरस्कार इसलिए दिये गये थे कि...मैं गुहा साहब की पद-वृद्धि के लिए...अफ़सरों को समर्पण नहीं कर सकी...मैंने पति के उस अफ़सर-समाज में विद्रोह किया था और विद्रोह की सज़ा. .उसी सज़ा ने मुझे...श्रेष्ठ बनाया।...और एक रात गुहा साहब अपने अफ़सर के साथ शराब पिये आये...उस शराबी को छोड़ पतिदेव कहीं...चले गये।.... एमन ! स्वत्व पर आँच आते ही शक्ति जाने कहाँ से फूट पड़ती है शिराओं में—जैसे कि सुप्त शिलाओं को चीर कर वेगवान निर्भर अजस्र फूट निकलते हैं...और फिर तो मुक्ति ! आवास-हीन, सम्बन्ध-हीन मुक्ति ! अनन्त अजस्र दिगन्ती प्रवाह...महत्त्व की ओर धावमान !

(वह मूर्तिवत फटी आँखों से देखती रह जाती है।)

एमन—रहने दो दक्षिणा !

दक्षिणा—(उसी रूप) नदियों की यात्रा-वेदना को सीमासंयमी सिन्धु, कभी समझ सकेगा ? सकेगा ?

एमन—न समझे, किन्तु हम सूत्रित तो होते ही हैं। हमें यही वेदना...खंडिता पंथहारा बनाता है।

दक्षिणा—और ये पंथहारा, शेष मानव-स्पन्दन से मिलकर सर्वहारा बनते हैं।

एमन—इसे मिलना न कहो, सहस्थिति कहो।

दक्षिणा—तुम लड़ो शब्दों पर। हम तो आत्मसात जानती हैं। जिस दिन मन-खंडित मध्यवर्गीय और स्थिति-खंडित निम्नवर्गीय मिल जायेंगे उस दिन समय की देवकी का नारीत्व सार्थक होगा।

एमन—(खड़े हो कर) लेकिन यह सार्थकता अभी दूर दिखती है।

दक्षिणा—(साश्चर्य) क्या ?

एमन—मैं ठीक कहता हूँ दक्षिणा ! ४२ के इस आन्दोलन में हम भाग न ले कर भारी भूल कर रहे हैं। यह आगामी भविष्य की ऐतिहासिक साक्षी

है। यह हमारे देश की आवाज़ है, रौद्र संगीत है, काल-हुँकार है—जो हमारे सारे नीति-तर्कों को बहरा कर देगी। वर्तमान की यह माँग है और हम वेग के प्रतिकूल पड़ गये हैं—देख लेना हम खंड-खंड हो जायेंगे।

दक्षिणा—तो तुम आज यही लिख रहे थे।

एमन—हाँ दक्षिणा! किन्तु मुझे ऐसा लगता है कि डिसिप्लिन हमें कभी कभी सत्य-कथन से विमुख कर देता है। कागज़ों पर हम रेखाओं की शक्लें बना कर अँग्रेज़ों को मित्रराष्ट्री होने के नाते कुछ भी सिद्ध कर दें, परन्तु जो आंदोलन देश में हो रहा है, वह असंगत होते हुए भी बहुत बड़ा सत्य है। नेताओं द्वारा पारिचालित न होते हुए भी सम्बद्ध है। पराजित हो जाने पर भी विजयी की चूलें हिला देगा। क्योंकि इसका नेतृत्व कोई राजनीतिक नहीं कर रहा। यह ज्वार वेग की भाँति स्वचालित, स्वशासित है। हम भूल कर रहे हैं, पार्टी भूल कर रही है, क्योंकि हम अत्यन्त बुद्धिमान हो गये हैं।

दक्षिणा—तो तुम्हें कहना चाहिए।

एमन—किससे? साहित्यकार को चालित करने के लिए राजनीतिज्ञ कूद पड़ेगा, क्योंकि वह शक्ति-सम्पन्न है। लेकिन राजनीति के विषय में साहित्यकार जो भी कहेगा उसे ये आवेश, भावना कह देंगे। जब इतने बड़े ऐतिहासिक आंदोलन की उपेक्षा कर सकते हैं तब बेचारे लेखक की क्या बिसात?

दक्षिणा—लेकिन तुम साहित्य और राजनीति में विरोध देखते हो तो कल से तो फिर सभी चीज़ों में अलगाव, पृथकत्व की बात करोगे। जब कि यथार्थ में कोई भी आइसोलेटेड नहीं है।

एमन—ठीक है, लेकिन सबके नियम होते हैं। यदि राजनीति या अर्थशास्त्र के नियम, पति-पत्नि के दाम्पत्य सम्बन्ध में भी लागू किये जायें तो तुम उसे

स्वीकारोगी ? जैसे बाह्य परिस्थितियों में संक्रांति के क्षण आते हैं, वैसे ही व्यक्ति के जीवन में भी आते हैं।

दक्षिणा—व्यक्ति-जीवन में संक्रांति ?

एमन—मैं इस आंदोलन को गलत मानते हुए भी—चूँकि वह है—इसलिए सही मानता हूँ। शेष इसे अस्वीकारते हैं। ऐसी स्थिति में क्या हो ? राजनीतिज्ञ, नीतिज्ञ होने के कारण शायद चुप रह जायें, किन्तु मैं यह सम्भव नहीं देखता।

दक्षिणा—तो क्या तुम ओपनली विरोध करोगे पार्टी का ?

एमन—विरोध नहीं, बल्कि आंदोलन में ओपनली योग दूँगा, और यही बात मैं पार्टी सेक्रेटरी से कह आया हूँ।

दक्षिणा—क्या ? क्या कहा माणिक ने ?

(तभी बाहर से—'मारो' 'काटो' का शोर सुनायी पड़ता है।)

दक्षिणा—(चिन्तित) शोर कैसा ?—तो तुम क्या पार्टी से रिज़ाइन कर दोगे ?

एमन—(हँसते हुए) मोह को हमारे शास्त्रों में वर्जित किया है न ?

[तभी लोग फावड़े लट्ठ, छुरे, चाकू लेकर घुसते हैं। वे कमरे की चीज़ें, नेताओं के चित्र सब फाड़ देते हैं। रूस के एजेण्टों का नाश हो—इंकलाब ज़िन्दाबाद, अंग्रेज़ों के पिट्ठूओं—कम्युनिस्टों का नाश हो—महात्मा गाँधी की जय ! आदि नारे लगाते हैं। वे सारा सामान तोड़-फोड़ रहे हैं। एमन दक्षिणा को बगल में किये है, मौका देख कर बचना चाहता है, तभी उसके सिर पर लट्ठ पड़ता है, फिर वह दक्षिणा को बाल-बाल बचाता निकल भागता है।]

(पटाक्षेप)

पञ्चम दृश्य

['रनजीत द सिगनलर' की कोठरी। समय सवेरे के दस बजे हैं। यह रेलवे क्वार्टर है, जहाँ रनजीत अपनी पत्नी तथा माता के साथ रहता है। इस समय कमरे में केवल एमन विकलता से टहल रहा है। कमरे में एक खिड़की है—मंच के बीच में—जिसमें दूर एक सिगनल दिखायी देता है। कमरे में सज्जा के नाम पर कुछ नहीं है। दाहिने हाथ पर ताक है, जिसमें पर्वतधारी हनुमान का प्रसिद्ध चित्र है, जिसके सामने एक दीया जल रहा है। पास ही उसके एक ढोलक टँगी है खूँटी पर, ढोलक के नीचे रनजीत की नीली कमीज़ भी टँगी है। एक गन्दा सा बिस्तरा तह किया वहीं कोने में पड़ा है। बायें हाथ की खूँटी पर रनजीत की पत्नी का लुगड़ा अस्त-व्यस्त पड़ा है। कुछ बर्तन इधर-उधर बिखरे पड़े हैं, जिसके बीच एक चटाई पर, जहाँ एमन घूम रहा है, एक पिस्तौल पड़ा है। एमन कुरता-पायजामा पहने है जो बहुत गंदे हो गये हैं। उसके बाल भी अस्तव्यस्त हैं। वह प्रतीक्षा कर रहा है दक्षिणा की, जिसे बुलाने रनजीत गया है। तभी रनजीत के आगे आगे दक्षिणा सावधानी से प्रवेश करती है। एमन किसी के आगमन की आहट देखकर सिंह-की-सी फुर्ती के साथ पिस्तौल उठा कर आहट की ओर तान देता है और कड़क कर—]

एमन—(नाटकीय ढंग से) कौन ?

दक्षिणा—(डरी सी)...मैं....दक्षिणा...अरे रे...

(एमन अट्टहास कर उठता है।)

दक्षिणा—वाह जी, व्यर्थ ही डरा दिया। यह क्या ?

एमन—बस ! डर गयी ? इसी साहस से कम्यूनिस्ट बनी फिरती हो ?

दक्षिणा—अच्छा तो नाटक कर रहे थे ? मान लो छूट ही जाती यह तो।

एमन—(**पिस्तौल रखते हुए**) रनजीत ! इनको बता दो पिस्तौल छूटने पर क्या होता है ।

(**सब हँसते हैं ।**)

रनजीत—एमन दा ! मैं तो डर ही गया था । अच्छा तो फिर मैं चाय लेकर आता हूँ ।

एमन—लेकिन पुलिस के पहुँचने पर तुम और चाय दोनों पहुँच जाओ इसी शर्त पर समझे !

रनजीत—मैं सिगनल डाउन ही रखूँगा तो !

(**हँसता हुआ वह जाता है ।**)

दच्छिणा—(**एमन का हाथ पकड़ते हुए**) तुम कहाँ थे, दो महीनों से ! बताओ ?

एमन—धीरज रखो दच्छिणा ! (**और दक्षिणा को कंधों से पकड़ कर उसकी आंखों में झाँकते हुए**) मैं तुम से अलग होकर यही देखने गया था कि कहीं मैंने भावुकतावश इस आंदोलन की शक्ति को पार्टी की नीति से अधिक शक्तिवान तो नहीं समझ लिया ?

दच्छिणा—(**अपने को अलग करते हुए**) नहीं, मैं भी मानती हूँ कि यह आंदोलन भावुकता नहीं है, बल्कि अग्निसत्य है, तभी १०६ पार्टी मेम्बरों में से अब कुल ६ होलटाइमर्स ही रह गये हैं । उस दिन पार्टी आफ़िस पर हमला भी अपने में एक तथ्य है । फिर भी हमारी पार्टी के सामने इस आंदोलन का महान रूप किसी अनागत युग में स्वप्नित है एमन बाबू !

एमन—ठीक है दच्छिणा ! मैं भी लाल विद्रोह के होते तुम्हीं लोगों में अपनी स्थिति पाता हूँ ।

दच्छिणा—विवशता वश !

एमन—मेरे निकट विवशता एक ही है दच्छिणा और वह है जी[illegible] वही ! हम

विवशतावश नहीं, संघश्रेष्ठ के सिद्धान्त के साथ, बल्कि मेरे स्वत्व की गंगा के लिए वहीं महाविलय है।

दक्षिणा—(**आवेश संगे**) सच ! एमन सच ! मैं समझती थी कि तुम हमें छोड़ गये, बोलो एमन ! हमारी इस संघचेतना के प्रति तुम्हारी आस्था यथावत् है।

एमन—क्या तुम्हारे सामने भी दुहराना होगा ? तुम्हीं तो मेरी प्रतिध्वनि हो।

(**और उसकी ठोढ़ी पकड़ कर मुख ऊँचा करता है।**)

दक्षिणा—(**बड़ी लाज संगे**) अभिनय तो तुम्हें खूब आता है।—हटो !

एमन—आज तक और किया क्या है ? भूख के खेत में जुआर के ठूँठ की फ़सल सा पैदा हो कर अनाज का नाटक किया। पंडित वेदव्रत जी की दवाइयाँ कूटने का नाटक किया। क्रांतिकारी बन कर १५ बरस तक कैदी का अभिनय किया। कम्यूनिस्टों के बीच विरोधी का नाटक करता हूँ। मेरे चले जाने के बाद शायद तुम सोचो कि मैं प्रेम का नाटक कर रहा था। जब लोगों को मालूम होगा कि एक कम्यूनिस्ट ने आँदोलन में भाग लिया तो काँग्रेसी, जनता से कहेंगे कि यह कम्यूनिस्ट नाटक कर रहा है क्योंकि जनता को तो समझाया गया है न कि रॉय की भाँति कम्यूनिस्टों को भी अँग्रेज़-सरकार धन देती है।

(**और यह कहते कहते एमन प्रत्यंचवत् खिंच उठता है।**)

दक्षिणा—यह सब क्या कह रहे हो ? क्या तुम मुझे भी छोड़ कर चले जाओगे ?

(**और वह एमन को बाँहों से पकड़ कर झकझोरती है।**)

एमन—जाना एक निरपेक्ष गति है दक्षिणा ! जिसे हम और तुम, गाँधी और मार्क्स, साम्यवाद अथवा पूँजीवाद कोई भी नियंत्रित नहीं कर सकते। वह मानवेतर सत्ताक्षेत्र है। हमारा विनय या प्रणतत्व ही वहाँ विजयी हो सकता है, बुद्धि अथवा बन्दूक कुछ काम नहीं करते, कुछ नहीं करते। देखो न, मैं

यदि चाहूँ भी कि तुम मेरे निकट ऐसे ही एकान्ततारा सी रहो तो......किन्तु रनजीत अभी आयेगा, चाय आयेगी और फिर पुलिस !

दक्षिणा—पुलिस ?

एमन—क्यों ? संघश्रेष्ठी आश्चर्य नहीं करता है दक्षिणा ! जिस दिन, कम्यूनिस्ट में भारतीय आस्था भी समाहित हो जायेगी, वह दत्तात्रय हो जायेगा, अग्नि हो जायेगा। और तुम समझती हो कि परसों के रेलवे ब्रिज, पोस्ट आफ़िस जलाने वाले एमन को अपने अंचल से ढँक लोगी ? जो कि जेल की सम्पत्ति है ? इतना मोह न करो दक्षिणा, पछताओगी......

दक्षिणा—(हल्के रुँआसे ढंग से) तो...तो...सब......

एमन—कहाँ सब ? सब भस्म हो जाता तो अँग्रेज़ हमारी भूमि पर आज दिखता ? (खिड़की से झाँकते हुए) वो देखो रनजीत दि सिगनलर और चाय से पहले तो पुलिस आ रही है।

(हल्के से हँस देता है।)

दक्षिणा—(हाथों में मुँह छुपाते हुए) लेकिन मुझसे भी तो पूछा होता—

एमन—(दक्षिणा का मुख अपनी हथेलियों में लेते हुए) सच ? इतना और अपने को सौंप रही हो ? तो ठीक है, इस बार बिना पूछे और चला जाने दो। पूछ कर जाने का सौभाग्य अगली बार के लिए, हाँ ?

(और 'हाँ' इस ढंग से कहता है कि दोनों हँस पड़ते हैं।)

दक्षिणा—(घबराते हुए) लेकिन नहीं, अभी भी निकल सकते हैं यहाँ से।

एमन—पगली, परसों से सात स्थान तो बदल चुका। गाँधी जी की बात मैंने भी माननी चाही थी कि जेल में बैठने से ठीक होगा बाहर रहना और काम करना, किन्तु आंदोलन और देश को इस समय किसी विशेष व्यक्ति की आवश्यकता नहीं है दक्षिणा, बाढ़ आने पर जैसे कुछ भी शेष नहीं होता—बस, जल ही की रौद्र प्रवाहमान सत्ता जैसी रहती है न ? बस वही ! हम

पलायन इसीलिए न चाहते हैं कि बाहर रह कर इस विद्रोही प्रवाह-सत्ता को रूप दें। यह मिथ्या है। व्यवस्था देने वाले तट इस बेला डूब चुके हैं। आज तो डूबने में ही हमारी स्थिति है दक्षिणा !

दक्षिणा—(कुछ रोष संगे) मैं देखती हूँ कि तुम अपने व्यक्तित्व के उन्माद तथा ज्वाला को ही व्यापक करके देखते हो। तभी न तो अपने पर ही किसी का नियन्त्रण स्वीकारते हो और न अपने द्वारा सृजित बाह्य पर।

(तभी पुलिस द्वार खटखटाती है—'खोलो' 'खोलो'—भड़ भड़ की आवाज़ें)

एमन—(हँसते हुए) तुम्हें उत्तर फिर कभी दूँगा, वरना इन बेचारों को द्वार तोड़ने पड़ेंगे।

[दक्षिणा बढ़ते हुए एमन को पकड़ लेती है। तभी द्वार तोड़ पुलिस बन्दूकों में बेनेट लगाये घुस पड़ती है।—इन्सपेक्टर हुक्म देता है—]

पु० इन्सपेक्टर—हैण्डस अप। यू बोथ आर अण्डर अरेस्ट !!

एमन—बट शी इज़ नाट...

पु० इन्सपेक्टर—डोंट टॉक—कम ऑन।

(पटाक्षेप)

चतुर्थ अंक

सूत्र दृश्य ४

[तृतीय अंक की समाप्ति उपरांत मंच पर गहरा अंधकार हो जाता है। जेल का प्राथमिक दृश्य उभर आता है। जेल के कांस्य घंटे तीन बजाते हैं। वातावरण वही है। चाँदनी अस्ताचली हो गयी है। अँधेरा गाढ़ा एवं घना सा लगता है।]

संतरी—(दूर से डाक स्वर) गार्ड ! सात नम्बर सेल ! ताला बेड़ी आलरेटऽऽ !

गार्ड— (उसी रीते) सात नम्बर सेल ! ताला बेड़ी आलरेट ऽऽ !

संतरी—(अधिक दूर से डाक स्वर) गार्ड ! बार नम्बर सेल ! ताला बेड़ी आलरेट ऽऽ !

[पृष्ठ-भूमि में यह प्रतिसतर्कता डूब जाती है। समुद्र का गुर्राना भी जैसे थमा सा लगता है। गार्ड लखन भी शायद दरवाज़े के पास बरान कोट में लिपटा बैठा है, उसकी खाँसी ज़रूर सुनायी पड़ रही है। वह जानता है कि एमन जैसे व्यक्ति ख़तरनाक नहीं होते कि फाँसी का सुनने पर रोने लग जायें या भागने की सोचें। वह एमन बाबू का आदर करता है।]

एमन—(मंच की ओर मुँह किये सीखचों पर सिर टिकाये—स्वगत) जानता हूँ दच्छिणा ! परसों जब से तुम गयी होगी, यहाँ से मिलकर, विकल होगी, सोयी न होगी। तुम भी ऐसे ही जाग कर पिछला जीवन जी रही होगी और साथ में गर्भस्थ अभिमन्यु सा हमारा शिशु हमारे अबोले चक्रव्यूह को सुन रहा होगा। दच्छिणा ! तुमसे और उस अनाम, अज्ञात शिशु व्यक्ति से अब केवल दो घंटे का ही सम्बन्ध शेष है। (टहलने लगता है। उसके साथ ही उसके पैरों की बेड़ी खन खनें करती है) ठीक हुआ दच्छिणा ! जो तुम मिल

गयीं, अन्यथा इस जीवन में सिवाय जेल-यात्राओं के स्मरणीय क्या था ? यही न कि—विरोध, विद्रोह, उपेक्षा एवं क्षय ! (खाँसता है ।) स्वाधीनता का स्वागत जेल में किया था । मैं स्वाधीनता के सम्मान में बिस्तरे पर से उठ भी नहीं सकता था । पता नहीं कब तक ऐसे ही भुगतना पड़ता, किन्तु जेल के बाहर क्षय की सूचना पहुँच चुकी थी । राष्ट्रीय सरकार पर ज़ोर डाला गया कि मैं छोड़ दिया जाऊँ । जब मैं जेल के बड़े फाटक पर पहुँचा, आठ-दस साथियों के साथ दक्षिणा हुमस कर मिली थी । दो लाल झण्डे लिये हमारी टुकड़ी आगे बढ़ी थी । सामने खुली सड़क पर 'सर्वहारा क्रांति ज़िन्दाबाद' 'यह आज़ादी झूठी है, देश की जनता भूखी है'—वाक्य वाले झण्डे दोनों ताँगों पर लहराते— बढ़ गये थे ।

प्रथम दृश्य

[दक्षिणा का बासा । सवेरे के दस बजे का समय । एक साफ़ सुथरा, हवादार घोंसले सा कमरा । सामने की दीवार पर मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन तथा स्तालिन का सम्मलित शीर्ष चित्र । इसके ठीक नीचे एमन का बस्ट चित्र, जिस पर ताज़े गुलाब की माला स्पष्ट है । एक साफ़-सुथरी खाट पर उजली चादर वाला बिस्तरा दीवार से सटा है तथा तकिये रखे हैं । खाट के नीचे ही उगालदान । सिरहाने की ओर एक तिपाई पर एमन की प्रिय पुस्तकें हैं—जैसे रोम्या रोलां की 'आई शैल नॉट रेस्ट', गोर्की की 'माँ' रवीन्द्र की 'गीतांजलि' आदि...दो एक कुर्सियाँ भी हैं ।

एमन को हौले से पकड़े हुए दक्षिणा तथा माणिक आदि साथ प्रवेश करते हैं । खाट पर बैठ कर एमन बड़े जोरों से 'आह' कर के निश्चिन्त होने का भाव देता है । वह ५० के लगभग है । फिर कमरे में चारों ओर देखता है ।]

एमन—तो क्या मुझे इसी कमरे में रहना होगा? तो फिर वहाँ (जेल से तात्पर्य है उस का) क्या बुरा था?

(हँस देता है।)

दक्षिणा—हाँ, यहीं रहना होगा।

एमन—देखो भाई, जेल की तरह तुम भी कम्पेल करोगी कि—यह करो, वह करो!

दक्षिणा—आते देर नहीं हुई कि लड़ाई शुरु। मैं अनुशासन कर सकती हूँ, दिन भर आग्रह करने से रही कि—आप यह कर लीजिए, वह कर लीजिए!

[दक्षिणा यह सब कहते हुए यह बिलकुल ही भूल जाती है कि और लोग भी बैठे हैं—उन्होंने क्या सोचा होगा?—सब हँस पड़ते हैं।]

दक्षिणा—(रुंआसी सी) देखो न माणिक, क्या हालत हो गयी है!

माणिक—किसी को पता था कि आपकी दशा इतनी खराब हो गयी है!

एमन—अब तुम लोग तो बात बढ़ा रहे हो। मैं बिलकुल ठीक हूँ। हाँ सुनो माणिक! मैं चाहता हूँ, कल दास बाबू और प्रफुल्ल बाबू से मिल लूँ!

माणिक—क्या इसलिए कि ये मुख्य मंत्री तथा गृह मंत्री आपके पुराने परिचित हैं।

एमन—किसी स्वार्थ से तो एमन आज तक कहीं नहीं गया माणिक बाबू! मैं तो उन्हें इस बात के लिए धन्यवाद देना चाहता हूँ कि उदारता का परिचय तो दिया।

दक्षिणा—यदि राजनीतिक लोग और साहित्यिक लोग ज़ोर न लगाते तो ये आपके मित्र आपको छोड़ते?

एमन—मैं देखता हूँ कि तुम उन लोगों से बहुत नाराज़ हो, क्यों?

[खाँसी आ जाती है। दक्षिणा उगालदान आगे बढ़ाती है। एमन को लिटाती है।]

दक्षिणा—तो अब तुम विश्राम करो।

माणिक—शेष दी! ये विश्राम करें, मैं अब चलूँ।

दक्षिणा—माणिक, मैं चाहती हूँ कि इन्हें कुछ दिन पहाड़ पर लेकर चली जाऊँ।

एमन—(**एक दम तकिये के सहारे बैठते हुए**) माना कि क्षय लक्ज़री है, परन्तु पहाड़ पर नहीं जाने का।

दक्षिणा—अच्छा बाबा न जाओ बस! लेकिन एक बात तय है कि अब राजनीति की बजाय साहित्य-क्षेत्र में ही रहोगे।

एमन—(**हँसते हुए**) मुझे कैसे कमरे में सुहायेगा, क्या करना ठीक होगा—जब ये सब तुमने स्वयं ही तय कर लिया तो फिर मेरी ओर से उपन्यास भी लिख डालो न!

माणिक—(**हँसते हुए**) ज्यादातर बड़े लोगों के बारे में तो यही सुना है कि वे स्वयं नहीं लिखते।

दक्षिणा—(**एमन से**) और अभी तुम इतने बड़े नहीं हुए हो कि मैं तुम्हारे लिए लिखूँ।

(**सब की हँसी**)

एमन—(**हँसते हुए**) क्या तुम्हारे लिए भी नहीं।

(**सब का ठहाका**)

दक्षिणा—(**उठ कर जाते हुए**) किसके सामने क्या बोलना चाहिए, यह भी नहीं मालूम।

माणिक—(**दक्षिणा के जाने पर**) एमन दा! पिछली पार्टी काँग्रेस में कई साथियों ने आत्मविश्लेषण के मौके पर यह स्वीकार किया कि आंदोलन के सम्बन्ध में आपका स्टेण्ड ही ठीक था।

एमन—(**कुछ मुस्कराता है, फिर गम्भीर होकर**) तुम्हारी इस बात से मुझे

सन्तोष भी हुआ तथा यह भी कि राजनीतिज्ञों की लीला अपरम्पार होती है ।

माणिक—क्या ?

एमन—भूल स्वीकारना सबसे स्वस्थ दृष्टिकोण है—लेकिन तभी, जब इसका अर्थ यह हो कि आगे भूल नहीं करेंगे । किन्तु मुझे लगता है कि राजनीति में सत्य, दया, अहिंसा, जनता की रहनुमाई सभी अस्त्र हैं । ये सब नीतियाँ हैं उनके लिए, चरित्र नहीं । मुझे ग़लत न लेना माणिक ! प्रथम राजनीतिज्ञ कृष्ण को इसीलिए लीलामय कहा जाता है ।

(तभी दक्षिणा गिलास में फलों का रस लिये आती है ।)

दक्षिणा—फिर वही ? अपने से कोई कैसे शत्रुता करे, यह तुमसे सीखे ।

एमन—बाहर बोलता हूँ तो सरकार मना करती है । घर में बोलता हूँ तो ये सरकार मना करती हैं, देखो न माणिक ! सभी एक दूसरे पर ज़्यादती करना चाहते हैं ।

माणिक—(हँसते हुए) एमन दा ! आप की विद्रोहिनी जीवनी-शक्ति के लिए विश्राम अत्यावश्यक है । अभी बीमारी बढ़ी नहीं है । थोड़े संयम से सब ठीक हो जायेगा ।

एमन—(जैसे कहीं खो जाता है) यदि बीमारी बढ़ी न होती तो क्या बाहर राजनीतिज्ञों ने आंदोलन किया होता ? और वह भी एक विद्रोही के लिए ? और दासबाबू तथा प्रफुल्ल बाबू ने भी इतनी सहजता से छोड़ा होता ? किन्तु माणिक ! सरकार या राजनीतिज्ञ भूलते हैं कि विद्रोह के वट-वृक्ष के लिए ये यातनाएँ खाद हैं । निश्चय रखो, विश्वासो कि क्षय की खाद से संकल्प का सहकार बलवान होगा ।

[पास खड़ी दक्षिणा तथा अन्य साथी दिग्विमूढ़ हो जाते हैं । एमन का मुख प्रभामंडित हो जाता है ।]

एमन—इतनी स्वतंत्र धारणाओं के साथ ही तुम लोगों के साथ चल सकता हूँ। हो सकता है तुम्हारी व्यवस्था मुझे उपेक्षित करके आगे बढ़ जाये—किन्तु मैं अलग पड़ जाने पर भी तुम्हारे ही साथ, इस मुक्ति के जन के ही साथ रहूँगा, क्योंकि वही मेरी गति है। लेकिन मैं समस्त मानवता में सन्निहित श्रेष्ठ के संचयन के लिए किसी का भी निषेध नहीं मान सकता।

(सब चुप रहते हैं।)

माणिक—एमन दा ! आपसे मैं क्या कह सकता हूँ। कल अहमद साहब और कामरेड भूषण आपसे......

एमन—(फिर उसी रूपे) ठीक है माणिक ! इतिहास के गोपुर पर टँगे विजय के घंटों का नाद मैं प्रतिक्षण सुन रहा हूँ, साथ ही लाखों करोड़ों का चीत्कार भी।...इतना रक्त, अशेष आत्माहुति, महान विद्रोह तर्पण...सब व्यर्थ गया, समाप्त हुआ......

दक्षिणा—(एकदम तड़प कर) अतो आवेशेर कोनो प्रयोजन नेई......

[माणिक आदि चले जाते हैं—उनके चले जाने पर वह एमन का सिर दाबने लगती है।]

एमन—(कुछ देर शांति के पश्चात)—पानी चाहिए !

[दक्षिणा जाती है। एक गिलास में थोड़ा पानी और दूसरे गिलास में दूध लाती है।]

एमन—(पानी का गिलास लेते हुए दूसरे गिलास की ओर संकेत करते हुए) यह क्या ?

दक्षिणा—थोड़ा पानी पीना। दूध भी पीना है।

एमन—(पानी पी कर, दूध लेते हुए) मैं ने तुम्हें नाराज़ कर दिया है न दक्षिणा ?

[दक्षिणा पानी का गिलास दूर रखने के बहाने मुँह फेर कर खड़ी हो जाती है।]

दक्षिणा—तुम्हें क्या ? तुम्हारे निकट किसी अन्य का दुःख है भी ?

[**वह मुँह घुमा कर एकदम एमन को देखती है और फिर टूटे गाछ सी उससे लिपट जाती है।**]

एमन—ठीक है, आज तक कोई व्यक्ति-विशेष था भी तो नहीं, मेरे निकट सामूहिकता ही की तो संज्ञा रही, फिर भी मुझे दोष दोगी दक्षिणा ?

(**तभी रनजीत द सिगनलर प्रवेश करता है।**)

दक्षिणा—(**उसे देख कर सहसा एमन के बिस्तरे से उठते हुए**)—क्यों, कहाँ से ?

एमन—(**हँसते हुए**) अरे रनजीत द सिगनलर ? आओ, भाई आओ !

रनजीत—(**अत्यन्त प्रसन्नता के साथ, एमन के पैरों के पास बैठ कर**) आ गये एमन दा ! क्या करूँ दीदी के साथ जेल पर नहीं आ सका। कैसी तबीयत है ?

एमन—तो क्या हुआ, मैं बिलकुल ठीक हूँ ? राधा कैसी है ?

दक्षिणा—(**हँसते हुए**) पिछले महीने ही रनजीत बाप बना है। ऐसा मुँह ज़ोर है कि मिठाई विठाई कुछ नहीं खिलायी।

रनजीत—(**झेंपते हुए**) अब दीदी ! सच बताऊँ एमन दा को ?

दक्षिणा—(**झेंपते हुए**) क्या बात ? चुप !

एमन—क्या बात है रनजीत ?

दक्षिणा—अजी कुछ नहीं, ये ही मन से लगाता रहता है। आजकल रेलवे हड़ताल चल रही है न, तो वहाँ आफ़िस में बैठा बैठा बकवास किया करता है।

एमन—(**रस लेते हुए**) बात यह नहीं हो सकती, क्यों रनजीत द सिगनलर ?

रनजीत—(**मज़े से**) सच बात वो जो बिना कहे भी सच हो। एमन दा ! अब आप नहीं समझेंगे तो कौन समझेगा ?

दक्षिणा—(चिढ़ते हुए) कुछ नहीं, अब आप भी किसके मुँह लगे हैं। मैंने इससे कहा कि मिठाई खिलाओ तो......

रनजीत—तो बात यह हुई एमन दा! कि मैंने दीदी से कहा कि आप कब खिलायेंगी ? तो बोलीं कि जब तुम्हारे एमन दा घर लौट आयेंगे।

(ठहाका लगाता है।)

दक्षिणा—(झेंप कर एक दम लाल होते हुए) झूठ !

रनजीत—अब एमन दा ? विश्वास न हो तो माँ से पूछ लेना। और मज़े की बात तो यह कि शिवजी के मन्दिर में जाकर मनौती मना आयी हैं कि—(दक्षिणा तब तक झेंप कर एकदम भाग खड़ी होती है।) आप अच्छे हो जायेंगे तो ११ ब्राह्मणों से अभिषेक करायेंगी और ब्रह्मभोज भी, पर एमन दा ! रनजीत बिचारे को...कुछ नहीं"!

[दोनों अँगूठे हवा में हिलाता है। एमन और रनजीत जी भर कर हँसते हैं।]

एमन—अच्छा तो ये बात है !

रनजीत—एमन दा ! मज़ाक नहीं, दीदी आपको बहुत मानती हैं।

एमन—अच्छा ? तो तुम्हें उन्होंने घूस कितनी दी है ?

(अट्टहास)

दक्षिणा—(तेज़ी से प्रवेश करते हुए) अब आज ही सारा हँस लोगे कि कुछ शेष भी रखोगे ? क्यों रनजीत। तुम्हें तो हड़ताल क्या हुई बस......

रनजीत—तो मुझ पर क्यों बिगड़ती हैं ? खुलवादो हड़ताल, (नाटकीय मुद्रा से) सिगनल...अप एण्ड डाउन। डाउन एण्ड अप !

एमन—(रस लेते हुए) तो, तुममें अभी आस्था बाकी है।

(हँस देता है।)

दक्षिणा—तुम्हें तो आराम के सिवाय कुछ काम नहीं है। मैं रनजीत के साथ जाती हूँ।

रनजीत—मैं यूनियन से ही आ रहा हूँ दीदी! सब ठीक है।

एमन—(गम्भीर होकर) तो हड़ताल कितने दिनों से हो रही है यह?

रनजीत—तीन हफ़्ते तो हो गये। करीब २१ आदमी पकड़ लिये गये हैं।

एमन—क्या सरकार कोई शर्त मानने को तैयार नहीं है?

दक्षिणा—तुम्हारे दास बाबू को पार्टियों से फ़ुर्सत मिले तब न। यूनियन के लोग मिलने जाते हैं तो कहलवा दिया जाता है कि पहले हड़ताल बन्द करो, फिर बात करेंगे। लोगों के घरों में ज़हर खाने को पैसा नहीं है, उस पर उन्हें क्वार्टर खाली करना पड़ रहा है। आये दिन पुलिस पकड़-धकड़ करती है। यह स्वराज्य है?

रनजीत—दीदी! इस समय मैं जिस लिए आया था वह बात यह थी कि मुझे आज शाम तक पुलिस ज़रूर पकड़ लेगी। इसलिए आप जैसा कहें वैसा करूँ।

दक्षिणा—इस तरह हमारे एक एक कार्यकर्ता चले जायेंगे तो हम कैसे क्या करेंगे?

एमन—क्यों? नये बनेंगे! रनजीत तुम्हें कुछ और नहीं करना चाहिए, बल्कि शांति से पुलिस के साथ चला जाना चाहिए।

दक्षिणा—किन्तु राधा और रनजीत की माँ का फिर क्या होगा? क्वार्टर तो खाली करना पड़ेगा।

एमन—ये सारी बातें तो प्रतिनिर्भर हैं। इनसे नहीं बचा जा सकता। बड़े उद्देश्य की पूर्ति में ये बातें बाधक नहीं होनी चाहिएँ।

दक्षिणा—तो फिर ठीक है रनजीत!

रनजीत - शाम को तो आप आयेंगी न?

दक्षिणा—हाँ, क्यों?

रनजीत—नहीं मैंने सोचा कि एमन दा......

[दक्षिणा आँखों में ही घुड़कती है। वह हँसता हुआ जाता है। रनजीत के चले जाने पर दक्षिणा झेंपी-झेंपी सी दिखायी देती है। वह कुछ इधर-उधर करती हुई दिखती है। एमन ताड़ जाता है।]

एमन—सुनो, रनजीत की बात सच है?

दक्षिणा—(दूर से ही) तुम्हें तो कोई बात भर मिल जाये, बस !

एमन—सच मानो दक्षिणा ! जाने कितना कहना चाहता हूँ। तुम में आस्था है, यह शुभ है। गाँधी जी में भी आस्था है, इसीलिए वे शुभ-संकल्पी हैं। यद्यपि मैं उनसे सहमत नहीं। वे अपने सत्य का आग्रह भले ही विनयी होकर करें, पर यह भी तो लोगों के मत्थे मढ़ना है। हमारे साथी अपने सत्य को अविनयी होकर मनवाते हैं।—ये सब आग्रह क्यों?—कुरान को मानो, नहीं तो तलवार—मेरी बात मानो नहीं तो सत्याग्रह ! इन सब आग्रहों में आकार का ही तो अन्तर है। क्यों हम दूसरों का सोचना अपने ज़िम्मे लेते हैं? सच कहता हूँ, ऐसे तो मानवता का त्राण होने से रहा। यह तो आग्रहों का युद्ध है, मनुष्यता के त्राण का नहीं। श्रेष्ठ-संचयन के लिए कोई भी तैयार नहीं। गाँधी ने व्यक्ति के नारायणत्व को प्राप्त किया है तो मार्क्स ने व्यक्ति-सत्यों को इतिहास से सूत्रित करके सृष्टि-सत्य ऋत् की घोषणा की है—समन्विति चाहिए दक्षिणा। यदि यह न हुई तो आगामी संघर्ष आस्था एवं अनास्था का होगा।

(दक्षिणा एमन के सिर पर हाथ फेरती है।)

दक्षिणा—(रुद्ध कण्ठ से) शांत होओ एमन !

एमन—शांत होना न भी चाहूँगा तो क्या? राजनीति एक दिन मुझे शांत करके रहेगी। लेकिन जब तक हूँ तब तक तो असत्य एवं आग्रहों से विद्रोह करूँगा। मेरे बाद? न मेरा न इस विद्रोह-कथन का—किसी का भी अस्तित्व नहीं रहने दिया जायेगा।

दक्षिणा—यह क्या कहते हो ? मेरी ओर देखो, इस शिवत्व को व्यर्थ नहीं होना है। यह आदि-मानव द्वारा प्राप्त सत्य की, ज्ञान की अग्नि है, जो विज्ञानपुरी में, आग्रहों के संक्रमण-युग में भले ही उपेक्षिता कर दी जाये, किन्तु इसे भावी को सौंपना हमारा धर्म है।

(अंजुलि में एमन का मुँह भर लेती है।)

एमन—राजनीति के युग में भावना, उन्माद मानी जाती है दक्षिणा ! (**हँसते हुए**) अच्छा, लाओ बहुत बोल चुका। क्षय के कीटाणु मौसंबी के रस के लिए भूखे हैं।

दक्षिणा—(**रुँआसी सी**) आमार शपथ, जदि ऐई कथा......

(गला भर आता है।).

एमन—(**पीड़ित हास्य संगे**) अच्छा बाबा, अच्छा ! क्या मालूम था कि एक जेल से निकलने पर दूसरी......

(दक्षिणा जाती है। जल्दी से रस का गिलास लाती है।)

दक्षिणा—वह पाण्डुलिपि निकाल देना, दे आऊँगी प्रकाशक को।

एमन—ठीक है, मैंने उसके दो नाम सोचे हैं—एक तो भूख, दूसरे भूख की पैदावार—क्या ठीक रहेगा ?

दक्षिणा—(**हँसते हुए**) मैं ने पढ़ा जो बतलाऊँ ?

एमन—(**मज़ाक करते हुए**) तो पढ़ कर ही क्या बता सकोगी।

(हँस देता है।)

दक्षिणा—(**हँसते हुए**) तो फिर क्यों पूछा इस अपात्र से ?

एमन—अरे भाई, खरीदने के पहले कोई पुस्तक पढ़ता है ? पहले नाम सुनता है, इसी लिए बताओ कि सुनने में कौन ठीक रहेगा।

दक्षिणा—मुझे तो 'भूख' अच्छा लगता है, तुम्हें ?

एमन—भूख से भी ज्यादा अच्छी लगती हो......तुम !

(दक्षिणा झेंप जाती है, दोनों हँस पड़ते हैं !)

दक्षिणा—तुम अपने जेल के संस्मरण क्यों नहीं लिख डालते ?

एमन—क्या मेरा दिमाग़ खराब है ? मैं कोई आज़ाद या भगतसिंह हूँ ? मैंने विद्रोह सोचा है, लेकिन उसकी कार्य-चेष्टा तो ऐसी नहीं की जो महत्वपूर्ण हो। जो किया है वह लिख रहा हूँ।

दक्षिणा—(आत्म-संतुष्टि के साथ) सच ? इतने ही संयत तुम होगे, यही मैंने भी सोचा था।

एमन—(दक्षिणा के दोनों हाथ पकड़ते हुए) ये सब परीक्षाएँ, अभिषेक किस लिए हो रहे हैं ? ज़रा सुनूँ ?

दक्षिणा—साहित्यकार बुढ़ा जाये पर रसिकता नहीं जाती। छोड़ो—

एमन—मुझे बूढ़ा कहती हो ? याद रखना विवाह नहीं करूँगा, अगर फिर कभी कहा तो ?

दक्षिणा—(हँसते हुए) कौन करेगा तुमसे विवाह ?

(दक्षिणा की खिलखिलाहट)

(पटाक्षेप)

द्वितीय दृश्य

[मुख्य मंत्री दास बाबू का कक्ष, समय प्रातः काल आठ बजे। एक मसनद बीच में लगी है। उसी दीवार पर गाँधी और जवाहर का हँसता हुआ प्रसिद्ध चित्र लगा है। दाहिने हाथ की ऊँची तिपाई पर संगमरमर में गौतम का सिर रखा है। बायें हाथ पर क़ीमती सोफा-सेट सजा है। उसी हाथ पर कोणवत झूलते हुए ढंग का बैंगनी कीमती पर्दा एक पैटर्न बनाता टँगा है। तकियों पर ग्रामोद्योग शिल्प के गिलाफ़ लगे

हैं। दास बाबू अपने बंगीय परिधान में हैं। सफ़ेद खादी-मलमल का कुरता महीन खादी की धोती तथा चादर डाले बैठे हैं। वृद्ध हो गये हैं, किन्तु लाल सुर्ख़, गोरा रंग, प्रभावशाली व्यक्तित्व। उनका पर्सनल सेक्रेटरी पास ही बैठा हुआ शिष्टता से कुछ बातें कर रहा है। नितिन, पर्सनल सेक्रेटरी की आयु यही ३५ वर्ष की होगी। असमी मुखमुद्रा का व्यक्ति बड़े बड़े दाँतों वाला है। कुरता पायजामा पहने है तथा चश्मा धारी है।]

नितिन—आपने बुलाया तो एमन बाबू को है, वे बाहर बैठे भी हैं, किन्तु चीफ़ सेक्रेटरी ज़रूरी काम से आये हैं।

दास बाबू—कौन एमन बाबू ?

नितिन—वे जो कम्यूनिस्ट लेखक हैं......

दस बाबू—आइ सी...लेट हिम वेट।

नितिन—तो चीफ़ सेक्रेटरी मि० चढ्ढा......

दास बाबू—यस !

[नितिन जाता है। दास बाबू अपने आस-पास पड़ी हुई फ़ाइलों में से एक फ़ाइल उठाते हैं। चश्मा निकाल कर पहनते हैं और ध्यान से पढ़ने लग जाते हैं। चढ्ढा प्रवेश करते हैं और मुख्य मंत्री के ध्यान की प्रतीक्षा में खड़े रहते हैं। चढ्ढा सूट पहने ४५ वर्ष के व्यक्ति हैं। टिपीकल आई० सी० एस वर्ग के हैं—ग्लीसरीन से चमकते बालों, टाई और चमकदार जूतों में अपने वर्ग का सही प्रतिनिधित्व करते हैं। उन्हें खड़े कुछ देर हो जाती है। तीन-चार फ़ाइलें साथ लिये हुए हैं।]

दास बाबू—(फ़ाइल में देखते हुए) टेक यूअर सीट।

चढ्ढा—थैंक्यू सर !

दास बाबू—(चश्मा उतारते हुए) हाँ, क्या बात है ?

चढ्ढा—(एक फ़ाइल देखते हुए) शूगर मिल्स की हड़तालों का आज १८वाँ

दिन है और मज़दूरों को कम्यूनिस्ट भड़काये हुए हैं। सिचुएशन इज़ गोइंग फ्राम बेड टु वर्स। मज़दूरों ने नाका-बंदी कर रखी है।

दास बाबू—प्रफुल्ल बाबू का क्या डिसीयन है।

चढ्ढा—सर ! एच. एम. डिस्ट्रिक्ट मेजिस्ट्रेट के सुझाव से एग्री नहीं करते। लाठी चार्ज से या गिरफ़्तारियों से मज़दूर ज्यादा एजीटेटिड होंगे। ताला-बंदी को भी कई दिन हो गये हैं।

दास बाबू—अभी इसे रहने दीजिए ! प्रफुल्ल बाबू से और डिसकस कर लिया जायेगा। ह्वाट नेक्स्ट ?

चढ्ढा—(**तेज़ी से दूसरी फ़ाइल आगे करते हुए**) ये बसों के मालिकों का केस है।

दास बाबू—रोडवेज़ के नेशनेलाइज़ेसशन का विरोध हम सहन नहीं कोरेगा, बोल दो।

चढ्ढा—लेकिन सर ! रावराजा साहब ने इन बस-मालिकों को अपना सहयोग देना तय कर लिया है। उनकी अपनी भी तो २०० बसें हैं।

दास बाबू—(**सोचते हुए**) अच्छा तो ठीक है, एच. एम. से कह दो कि इस मामले में जल्दबाज़ी न करें राव राजा साहब से कनसल्टेशन करना होगा।

चढ्ढा—(**तीसरी फ़ाइल सामने करते हुए**) और सर, ये टीचर्स पे-कमीशन की रिपोर्ट है। बेसिक-पे पर तीनों सदस्यों के मत नहीं मिलते। सरकारी प्रतिनिधि मि० कपूर का कहना है कि ६०) रुपये दी जानी चाहिए और जन-प्रतिनिधियों का कहना है कि ३५ से ४० रु० दिये जाने चाहिएँ !

दास बाबू—जन प्रतिनिधियों में......

चढ्ढा—(**फ़ाइल देखते हुए**) एक तो वंशखेलावन सिंह जी एम० पी० हैं...

दास बाबू—और चेयर मैन तो राधाकान्त जी हैं न ?

चढ्ढा—जी हाँ

दास बाबू—ठीक है, जन-प्रतिनिधियों की ही बात मानी जानी चाहिए। ह्वाट नेक्स्ट ?

चढ्ढा—(**एक फ़ाइल बढ़ाते हुए**) आइरन एण्ड स्टील के परमिट के लिए दो-तीन कम्पनियाँ......

दास बाबू—किरण बाबू को दिया जाये।

चढ्ढा—सर !...उनकी तो एपलीकेशन......

दास बाबू—वो सब हो जायेगा। (**डाकते हुए**) नितिन (**चढ्ढा से**) एनीथिंग ऐल्स ?

चढ्ढा—नो सर।......

(**वह फ़ाइलें समेट कर जाता है।**)

नितिन—(**प्रवेश करते हुए**)...जी !

दास बाबू—किरण बाबू कहाँ हैं ?

नितिन—बुलाता हूँ, प्रफुल्ल बाबू आये हैं।

दास बाबू—पहले किरण को बुलाओ !

[**किरण स्लीपिंग गाउन में प्रवेश करता है। राय बाबू का सब से छोटा लड़का है, विलायत से लौटा है। नितिन बाहर चला जाता है।**]

दास बाबू—क्या सो रहे थे ?

किरण—पापा ! लंदन से यहाँ तक का एयर ट्रेवल भी बड़ा ही टाइरिंग है।

(**बगासी लेता है।**)

दास बाबू—सुनो बेटा, आज आइरन एण्ड स्टील के परमिट के लिए कैसे क्या करना होगा, इसके लिए चीफ़ सेक्रेटरी से मिल लेना, समझे। अब जाओ !...नितिन ?

[**नितिन के साथ साथ प्रफुल्ल बाबू भी प्रवेश करते हैं। वे एक दम राष्ट्रीय वेश में हैं।**]

दास बाबू—आइए, प्रफुल्लो बाबू !

प्रफुल्ल बाबू—आप तैयार नहीं हुए। चालीस मील जाना है, टाइम तो लगेगा ही।

दास बाबू—ओह, नितिन। स्पीच टाइप हो गयी ? और कौन हैं मिलने वाले ?

नितिन—डाइरेक्टर सक्सेना साहब का अभी फ़ोन आया था कि स्पीच टाइप हो रही है। वे उसे लेकर स्वयं पहुँच रहे हैं। वो एमन बाबू बैठे हैं, लेकिन मेजर जनरल तिलक चंद भी वेट कर रहे हैं।

(तभी फ़ोन की घंटी टुनटुनाती है।)

नितिन—(फ़ोन पर) यस, चीफ़ मिनिस्टर्स रेसीडेंस ! यस...कौन ? ए० डी० सी० बोस बोल रहे हैं...,जी...एक्सीलेंसी वान्ट्स सी० एम० इमीजीएटली ? ...यस होल्ड आन...

दास बाबू—कह दो दस मिनट में आते हैं।

नितिन—(फ़ोन पर) सी० एम० दस मिनिट में आते हैं।

(रिसीवर रखता है।)

दास बाबू—तिलक चन्द जी को बुलाओ।

[नितिन जाकर मेजर जनरल को भेजता है। तिलक चन्द ऊँचा पूरा कद्दावर व्यक्ति है। एक दम मिलिट्री वेशभूषा में है। मुँछे उमेठी हुई।]

दास बाबू—(हल्के उठते हुए साथ ही हँसते हुए प्रणाम करते)...आइए ! कैसे हैं ?

[मेजर जनरल बढ़ कर दास बाबू के दोनों हाथ अपने हाथों में ले कर हँस पड़ता है।]

मेजर जनरल—सुना था बीमार थे ?

दास बाबू—अब बुढ़ापे में बीमारी तो लगी ही रहती है।

मेजर जनरल—नहीं अभी तो ख़ास कोई एज भी नहीं हुई आप की।

दास बाबू—अब खास क्या, पचहत्तर पूरा हो गया। किसी खास काम से तो नहीं आये न आप।

मेजर जनरल—इनाग्युरेशन में ही जा रहा था, सोचा दर्शन करता चलूँ।

दास बाबू—बड़ी कृपा की आपने। हाँ वो...एमन बाबू को क्या काम है?

प्रफुल्ल बाबू—शायद अपने नावेल की ज़ब्ती के बारे में आये होंगे। मेरे पास भी प्रेस यूनियन के वरकर्स का प्रस्ताव इसके विरोध में आया है। ये कम्यूनिस्ट किस चीज़ का विरोध नहीं करते?

मेजर जनरल—अरे जनाब! कम्यूनिस्ट पास फटकने देने के काबिल नहीं होता। आर दे ह्युमन बीइंग्स?

(मेजर मोटा मोटा हँसता है, शेष सब पतला पतला हँसते हैं।)

दास बाबू—तो ये अभी उन्हीं लोगों के साथ हैं? नितिन भेज दो उन्हें।

[एमन, धोती, कुरते तथा चादर में है। इस कक्ष के रोब-दाब में उसका व्यक्तित्व एक चैलेंज की तरह स्पष्ट हो उठता है। एमन पहले दास बाबू फिर प्रफुल्ल बाबू को नमस्कार करता है। मेजर जनरल उसे घूरता हुआ विमूढ सा लगता है। दास बाबू और प्रफुल्ल बाबू उसे देखते ही रहते हैं।]

दास बाबू—आइए, आज शायद पच्चीस बरस बाद आप से भेंट हो रही है।

(हँसते हैं।)

एमन—जी हाँ, उस मुकदमे के बाद से तो यही रहा......यह तो मेरा सौभाग्य है कि आज भी दर्शन हो गये।

प्रफुल्ल बाबू—आपकी बीमारी अब कैसी है?

एमन—अब ठीक हूँ।

दास बाबू—जेल से छूटे तो एक साल से ज़्यादा हो गया होगा?

एमन—जी हाँ चौदह महीने।

दास बाबू—आजकल बस लिखते-पढ़ते ही हैं या और कुछ......

प्रफुल्ल बाबू—आप तो कम्यूनिस्ट पार्टी की सी० सी० में भी हैं।

दास बाबू—(नितिन से) जाओ, चलने की तैयारी करो। हाँ किसलिए कोष्ट किया। एक बात पहले बता दूँ कि जदि अपने नावेल की जब्ती के बारे में कहने आये हो तो क्षमा चाहूँगा।

एमन—अपने बारे में कुछ भी कहना होता तो दास बाबू, आठ से दस—दो घंटे प्रतीक्षा नहीं करता।

दास बाबू—तो फिर? प्रफुल्लो बाबू ने कितना अच्छा सजेशन आपको भिजवाया था कि आप या तो कोई सरकारी नौकरी कर लें, न हो काँग्रेस में आ जायें। कहिए प्रफुल्लो बाबू! कभी कम्यूनिस्ट अपने विरोधियों को इतना अवसर देते हैं?

(हँस पड़ता है।)

एमन—दास बाबू! आपने मुझे जेल से छोड़ा उसके लिए कृतज्ञ हूँ। मैं तो इस वक्त नौकरी माँगने नहीं, एक प्रार्थना लेकर आया हूँ। मैं तो रनजीत नाम के रेलवे मेन यूनियन......

दास बाबू—आप उस रेलवे मेन को बेल पर छुड़ाने आये हैं? मैंने फाइलें देखी हैं उस सम्बन्ध में।

एमन—जी हाँ, दास बाबू! रनजीत की माँ मरणासन्न है। रेलवे उससे क्वार्टर खाली करवाने पर तुली है। उसे आप दो-चार दिन के लिए छोड़ दें तो अत्यन्त मानवीय कार्य होगा।

दास बाबू—यह रेलवे का मामला है, इसमें हम कुछ नहीं कोर सकता। एक बात का बुरा तो नहीं मानिएगा? इन रेलवे के लोगों को, फेक्ट्रियों के मज़दूरों को, कालेज के विद्यार्थियों को आप लोग जब भड़काता है तब भी शायद मानवीय भावना से ही ऐसा कोरता है।

एमन—आपसे बहस करने नहीं आया हूँ और फिर सिद्धान्तों की लड़ाई यों सुलझायी भी तो नहीं जाती?

दास बाबू—एमन बाबू ! मुझे मालूम है कि आप प्रतिभावान हैं। इसीलिए मुझे दूसरे कम्यूनिस्टों से कहीं...ज्यादा आपके लिए दर्द है।

प्रफुल्ल बाबू—आप तो घर के व्यक्ति हैं।

दास बाबू—क्यों नहीं आप राजनीतिक कार्य छोड़ देते। हम तो चाहेगा कि आप देश में कोई ऐसी शिक्खा संस्था खोलें जहाँ बच्चों का भविष्य बने।

एमन—मैं आपके सुझावों के लिए कृतज्ञ हूँ, किन्तु आपने मेरी बात पर शायद ध्यान नहीं दिया।

दास बाबू—रनजीत को छोड़ने वाली ? हम कुछ नहीं कर सकता इसमें। **(नितिन की ओर देख कर)** चलें ?

नितिन—जी हाँ !

दास बाबू—हमने सुना है कि गाँधी जी के सिद्धान्तों से आपको बहुत विरोध है ?

[तभी नितिन पश्मीने की एक शाल दास बाबू को देता है। दास बाबू के खड़े होने पर सभी खड़े हो जाते हैं। पश्मीने की शाल ओढते हुए।]

दास बाबू—एमन बाबू ! गाँधी जी ने हमें जीवन का सादगी, अहिंसा, शान्त, त्याग और विरोधियों के प्रति भी उदारभाव सिखाया। रूस में तो आपने किसी विरोधी को नहीं छोड़ा। यहाँ हामरा विरोध में, नेहरू के विरोध में और तो और राष्ट्रपिता गाँधी जी के विरोध में लिखने पर भी हम कुछ नहीं करते। गाँधी ने हम मनुष्यों को क्या यह सब मानवीय भाव नहीं दिया।

(सब एकदम चलने को होते हैं।)

एमन—दास बाबू। गाँधी जी ने अनेक लोगों को स्वाधीनता दिलायी, कुछ लोगों को मेम्बरी दिलायी, कुछ को मन्त्री-पद तक दिये। ये देन क्या कम है ?

[दास बाबू, प्रफुल्ल बाबू एकदम लाल हो जाते हैं। मेजर जनरल दिग्विमूढ़ सा खड़ा रहता है।]

दास बाबू—(विक्षिप्त से) क्या आप, क्या आप......

एमन—आपका अपमान भला कैसे कर सकता हूँ ? किन्तु क्षमा करें दास बाबू ! यहाँ सब 'अर्थात' हैं—जैसे इण्डिया—देट इज्-भारत। पीपुल—देट इज्—केपीटेलिस्ट......

[और एमन सहसा चुप हो जाता है। दास बाबू एकदम फुँक उठते हैं। एमन सबको नमस्कार करता है।]

(पटाक्षेप)

तृतीय दृश्य

[दक्षिणा का वही कमरा है। उसी दिन दोपहर का समय है। शारदीय दोपहर खिली सूरजमुखी-सी है। सब बड़ा उजला-उजला सा लग रहा है। कमरे में स्वच्छता स्पष्ट है। एमन मुख्य मन्त्री के बाद प्रकाशक से मिल कर लौटा है।]

एमन—(प्रवेश के साथ, कमरे में किसी को न देख कर डाकते हुए) दक्षिणा !

दक्षिणा—(पृष्ठभूमि से) आश्चे !

[एमन तब तक तिपाई पर रखी किताबों में से रवीन्द्रनाथ की संचयिका उठा कर बीच में से खोलता है और पढ़ना आरम्भ करता है—]

तोमाय,
साजाबो यतने, कुसुमे रतने
केयूरे कंकणे, कुंकुमे चन्दने
साजाबो तोमाय, साजाबो......

[तभी दक्षिणा एक हाथ में चाय तथा दूसरे में फलों का रस लेकर अत्यन्त नाटकीय मुद्रा में हौले से आती है ।]

दक्षिणा—(नृत्य भाव से) के के साजाबो महाराज ?

एमन—(एक क्षण उसे देख कर) तोमाय साजाबो—कुसुमे रतने, केयूरे कंकणे...

(और बढ़ता है जैसे सिंहासन से नीचे उतर कर बढ़ रहा हो ।)

दक्षिणा—देखो जी, जो मुँह में आता है बक देते हो, किसी दिन नाराज़ हो जाऊँगी ।

एमन—(बनावटी डर के साथ) यह तो...यह तो गुरुदेव कह रहे हैं, देखो इस पोथी में है । पोथी खोली और अनायास ही यह गीत खुल गया ।

दक्षिणा—(बनावटी क्रोध संगे) अनायास भी कभी आयास हो जाता है ।... जाओ क्षमा किया तुम्हें !

(दोनों हँस देते हैं ।)

एमन—तुम इस बेला भी चाय......

दक्षिणा—तुम फलों का रस पिओ तो कोई बात नहीं और मेरी चाय पर आपत्ति ? बड़े वो हो जी तुम !

(तिरछे देख कर लाल हो उठती है ।)

एमन—आज बहुत फ़ार्म में हो, क्या बात है ?

दक्षिणा—अरे जनाब । यहाँ तो रोज़ ही फ़ार्म में रहते हैं, कोई समझे तब न !

[दोनों खिलखिला कर हँस पड़ते हैं । दोनों पीना पी चुकते हैं । दक्षिणा एमन के हाथों से गिलास लेती है—]

दक्षिणा—क्या हुआ ? गये थे दोनों जगह ?

एमन—(अत्यन्त गम्भीर हो कर) हाँ !

दक्षिणा—क्या कहा दासबाबू ने ? कब छोड़ देंगे रनजीत को ?

एमन—दक्षिणा । संसार में सब से कायर होती है सरकार । रनजीत जैसे व्यक्ति

से भी उसे डर होता है। उनकी दृष्टि में कम्यूनिस्ट व्यक्ति नहीं होता, मनुष्य नहीं होता, बल्कि वह तो सिद्धान्त होता है। दो घंटे की प्रतीक्षा के बाद...

दक्षिणा—दो घंटे बिठाये रखा ?

एमन—जाने दो दक्षिणा ! किस बात का दु:ख करें ?

दक्षिणा—रनजीत को न छोड़ना तो बड़ा अन्याय है।

एमन—(पीड़ित हास्य संगे) अन्याय क्या नहीं है दक्षिणा ? पशुओं की भाँति जीने वाला गरीब, क्या जीवन के साथ अन्याय नहीं कर रहा है ? जब सरकारी गोदामों, सेठों के कोठारों में अन्न सड़ रहा हो, तब भूखे मर कर जीना क्या अन्याय नहीं है ? अन्याय तो स्थिति है। यह कहो कि सब से बड़ा अन्याय यह है कि अन्याय न सहना ! सहन करो दक्षिणा ! जब तक यह सब विध्वंस कर सकने की क्षमता हम में न आजाये तब तक रनजीत, रनजीत की माँ, रनजीत की राधा—इन आदर्श अन्याय भोक्ताओं के साँचों में स्वयं को ढल जाने दो।

दक्षिणा—तो अब क्या होगा ?

एमन—इससे भी महत्वपूर्ण है कि ऐसा कब तक होगा ?

दक्षिणा—प्रकाशक ने क्या कहा ?

एमन—(**जेब से नोट निकालते हुए**) ये १००) दिये।

दक्षिणा—बस ? (**नोट लेते हुए**) लेकिन हिसाब तो बहुत ज़्यादा है।

एमन—कहता था—साब, पुस्तक ज़ब्त हो गयी, अब कौन ख़रीदेगा ?

दक्षिणा—तो क्या पिछला हिसाब......

एमन—तुम नहीं जानतीं, प्रकाशक वर्ग भी अजीब ग़लतफ़हमी वाला वर्ग है। पुस्तक किसी दूसरे की होगी, पर आप पर यह प्रदर्शित होगा कि ये ही महाशय पुस्तक के पिता जी हैं।

दक्षिणा—(**हल्के हँसते हुए**) अब अपना भाषण रहने दो, लेकिन बाकी कब देगा, कुछ कहा ?

एमन—दच्छिणा ! साफ बात है कि मैं इन मूर्खों को—'बाबूजी ! आपने बड़ी साहित्य-सेवा की'...आदि नहीं कह सकता। ताकि ये सोने के अंडे वाली मुर्गी-से गर्दन फुलाकर फैल जायें और अंडे दे सकें।

दच्छिणा—(ताव से खड़े होते हुए) तो लड़ बैठे—दोनों ही जगह, है न ? हे भगवान, जब इतना दिया था इन्हें तब कुछ समझ भी दे दी होती तो क्या बिगड़ता ?

[सिर पर हाथ ले जाती है—एमन को हँसी आ जाती है, साथ ही दक्षिणा को भी।]

एमन—(**हँसते हुए**) तुमने सच ही कहा। दासबाबू पश्मीने की शाल ओढ़ कर जब सादगी पर भाषण देने लगे तब मुझ से नहीं रहा गया, तब......

दच्छिणा—(**कुछ रोष संगे**) बड़ा शुभ किया। कम्यूनिस्ट पार्टी इंटलेक्चुअलों का ग्रुप है, जिसमें ब्लाकहेड बैदा होते हैं। काँग्रेस परचूनियों की संस्था है, जिसमें भजनीक पैदा होते हैं ! यही सब कहते रहोगे ! होगा क्या इससे ? विध्वंस ! विध्वंस !!

(वह एक हाथ में गिलास, दूसरे में नोट लिये तेज़ी से जाती है।)

एमन—सुनो तो !

(थोड़ी देर बाद उसी तेज़ी से लौटती है।)

दच्छिणा—कौन कहता है कि तुम किसी दल-विशेष से बँध के रहो। इस अहं की भी कोई सीमा है ? सामने वाला झुकता हुआ टूट जाये—किन्तु तुम...तुम...बोलो मुझ से क्या चाहते हो ?...तुम न रहोगे.. तो किसी का क्या बिगड़ेगा...किन्तु कभी तुमने दच्छिणा के लिए भी सोचा ? वह तो तुम्हारे निकट कुछ भी नहीं है...पार्टी कामरेड के अतिरिक्त कदाचित उसे सोचा भी नहीं होगा....

[और हल्की रो पड़ती है। दोनों हथेलियों में मुँह छिपा कर भाग जाती है। एमन दिग्विमूढ़-सा बैठा रहता है। फिर कुछ देर बाद टहलने

लगता है। पृष्ठभूमि में डाकिये की आवाज़....डाक ले जाइए...कुछ विराम। दक्षिणा नयी भूषा पहने है। आज कुछ अतिरिक्त रूप व रंग है परिधान में। एमन एक मूर्ख की भाँति दक्षिणा के इस क्षण-क्षण परिवर्तित आचरणों को अबोले ही समझना चाहता है। इसलिए गौर से किन्तु मर्यादा के साथ उसे घूरता है। दक्षिणा आज झोले की बजाय एक पर्स हाथ में लिये है। हाथ में दो लिफाफे हैं। नीचा सिर किये प्रवेश करती है। बात करते हुए भी सिर नीचा रखती है।]

दक्षिणा—(गम्भीर होकर) यह पत्र डाक से आया है।

एमन—(पत्रों के लिए हाथ बढ़ाते हुए) और यह दूसरा ?

दक्षिणा—(हल्की मीठी झल्लाहट संग) अब मुझे क्या मालूम।

एमन—(दुखित हो कर) सुनो दक्षिणा ! मुझे तुम से कहना है।

दक्षिणा—(एकदम तेज़ी के साथ लिफाफे देती है और...) मैं जा रही हूँ, आध घंटे में लौटूँगी। इस बीच तुम्हें किसी भी चीज़ की आवश्यकता नहीं पड़ेगी, यह जानती हूँ...

एमन—सुनो तो...

[लेकिन दक्षिणा चली जाती है। एमन कुछ क्षण तो इस विलक्षण निवेश को देखता रहता है, फिर डाकवाला पत्र फाड़ते हुए :]

एमन—(नाटकीय ढंग से) 'प्रिय महोदय, ..नेहरू जी देश की महान विभूति हैं...वे आज के कृष्ण हैं...आगामी युगों के गौतम हैं....इस गांधीवादी क्रान्ति के अहिंसक अर्जुन को...अपनी श्रद्धाँजलि देने के लिए अनेक देशी, विदेशी रथियों-महारथियों ने सहयोग का वचन दिया है। आशा है आप भी सहयोग देंगे।...(पत्र मोड़ते हुए) व्हेरी गुड सम्पादक जी ! नेहरू जी बड़े हैं, इसलिए मैं लिखूँ...या रथी-महारथी लिख रहे हैं।' इसलिए मैं भी लिखूँ...या इसलिए कि मैं भी एक रथी हूँ—और हम सब रथी मिलकर नेहरू को बड़ा बना दें—जनाब, सब बकवास है !

(वह यह पत्र उठाकर फेंक देता है बिस्तरे पर। दूसरा पत्र फाड़ता है समझ नहीं पाता कि किसका है। हस्ताक्षरों के लिए पीछे देखता है—)
(चिहूँकते हुए) एँ, दक्षिणा ? (पत्र पढ़ते हुए) 'तुम्हें मुझ से विवाह करना होगा, नहीं मुझे तुमसे विवाह करगा होगा। इसलिए नहीं कि मैं तुम्हें व्यवस्थित कर सकूँगी— ना, बल्कि इसलिए कि—अब और लाज नहीं करूँगी तुमसे—पैंतीस की होने आयी। मेरे मातृत्व की आयु पाँच-छः वर्ष की ही और शेष है—नहीं चाहती कि मातृहीना रहूँ। दूसरे तुम्हारी इस आदि-अग्नि के वाहक की परम्परा देखना चाहती हूँ। किसी दूसरे को तो विवश कर देती, किन्तु तुम्हें नहीं कर पायी। मुझ से विद्रोह करो—इस योग्य नहीं, बस समेट लो।......

तुम्हारी —दक्षिणा।'

[एमन कुछ क्षण तो सोचता है, फिर हल्का प्रसन्न होता है और वह मुस्कान सम्पूर्ण विकास पाती है। धीरे धीरे गुनगुनाने लगता है :]

साजाओ, साजाओ तोमाय साजाबो—
कुसमे रतने
केयूरे कंकणे

[तभी दक्षिणा सहसा बाहर से लौटती है तेज़ी के साथ, जैसे कोई चीज़ छूट गयी हो।]

दक्षिणा—(यह कहते हुए प्रवेश करती है, पर मुँह दूसरी ओर किये हुए) वो—वो— कहाँ है—

एमन—(आगे बढ़ कर उसे कंधों से पकड़ते हुए) वो तो यह है !

(दक्षिणा नत-मस्तक खड़ी हो जाती है।)

दक्षिणा—छोड़िए मुझे जाना है।

एमन—ये बाहर जाने का नाटक क्यों किया पगली ? मेरी ओर देखो।

(दक्षिणा नत-मस्तक है।)

एमन—(**उसे साथ लिये हुए**) आओ !

[दोनों पलंग पर बैठ जाते हैं । दक्षिणा दूसरी ओर देखती है । एमन उसका मुँह अपनी ओर करता है ।]

एमन—सच दक्षिणा ! तुमसे मैं विद्रोह नहीं कर सकता । (**दक्षिणा धीरे-धीरे उसकी ओर देखती है ।**) किन्तु दक्षिणा भौतिक अर्थों में क्या तुम मुझ से सुखी हो सकोगी ? सोचता हूँ अपने स्वार्थवश तो तुम्हें बन्दी नहीं कर रहा ? क्योंकि वह अन्याय होगा । और जब कभी अन्याय की प्रतीति होगी तब...मुझे अपने से ही विद्रोह हो जायेगा ।

दक्षिणा—(**दूसरी ओर मुँह करके**) मैं समर्पण कर चुकी । भले ही उसे तुम लौटा दो । अब उसे नहीं अपनाऊँगी, वह तुम्हारा देय था, दे चुकी ।

एमन—(**एकदम उत्साह से**) फ़सलें पक गयीं दक्षिणा !

दक्षिणा—(**उत्साह से**) 'पकी फ़सलें' पूरा कर लिया ?

एमन—जेल से ही इस उपन्यास को लिख रहा था । आज पूरा हो गया । (**दोनों हँसते हैं ।**) मैं चाहता हूँ कि......

दक्षिणा—(**टोकते हुए**) अब भी 'मैं' 'मैं' ही करते रहोगे ? हम कहा करो !

एमन—(**हँसते हुए**) अभी से ?

दक्षिणा—(**हाथ छुड़ा कर जाते-जाते हँसते हुए**) नहीं, बिसमिल्ला की शहनाई के बाद ?

(**दोनों हँस पड़ते हैं ।**)

(**पटाक्षेप**)

चतुर्थ दृश्य

[दक्षिणा का वही कमरा है। समय प्रातः काल। कमरे में बस यही परिवर्तन हुआ है कि दीवार पर दक्षिणा एवं एमन का विवाह-चित्र टँगा है। एमन का पलँग अब यहाँ नहीं है। उसके स्थान पर एक मसनद आ गयी है। एक कोने में सारस की सो ऊँची तिपाई पर रवीन्द्र का बस्ट सफ़ेद मिट्टी का बना रखा है। इसे आसानी से दम्पत्ति का ड्राइंगरूम-कम-एमन का अध्ययन कक्ष कहा जा सकता है। एक तिपाई पर दवाइयों की शीशियां कायदे से जमी रखी हैं। बायें हाथ के कोने में एक राइटिंग टेबल, कुर्सी रखी है, जिस पर लिखने-पढ़ने का समान अत्यन्त सादगी से सज्जित है। वहीं पर एक ऊँचा सा टेबल लेम्प भी है। एक छोटी आलमारी में किताबें चुनी हुई हैं। इतना सब होते हुए भी कोई यह नहीं कह सकता कि इस कमरे का इनके जीवन में शोभा का स्थान है, आवश्यकता का नहीं। मसनद पर दो गाव-तकिये हैं। एमन सवेरे सवेरे ही स्नान आदि से निवृत्त, बैठा हुआ अख़बार पढ़ रहा है। वो बार-बार अखबार से आँख उठा कर देखता है, जिस से ज्ञात हो जाता है कि किसी की प्रतीक्षा की जा रही है। सुनहरी चश्मा, एडवर्ड डाढ़ी, व्यवस्थित कटे बाल, मुख पर विषाद की हल्की झाँई है—लेकिन आयु के बढ़ने के साथ साथ व्यक्तित्व तपे सोने सा निखर आया है।]

एमन—(नौकर को डांटते हुए)—काली पदो, काली पदो !

कालीपद—(पृष्ठ-भूमि से) की बोलेन बाबू !

[कालीपद बिहारी गंजी और धोती में साँवला सा पन्द्रह वर्ष का लड़का है।]

एमन—तुम्हारी बोऊ माँ, कहाँ हैं ? क्या जागी नहीं !

कालीपद—आमी की जानी, सोया होगा बोऊ माँ।

एमन—अरे तो चाय तो लाओ।

(वह जाता है।)

[तभी पीछे से दक्षिणा अलसायी सी आती है। बल्कि उठने के बाद की बगासी तक यहाँ लेती है।]

एमन—(हँसता है) अच्छा तो अब उठा जाता है? कौन कहेगा कि पाँच बजे उठने वाली दक्षिणा यही है। मुझे देखो!

दक्षिणा—किसी के कहने से क्या होता है, पहले मैं कोई पत्नी थी? और तुम्हारी तो बात ही निराली है।

(शरारत से दोनों हँसते हैं।)

[तभी चाय की ट्रे आती है। सब में गृहस्थी के चिन्ह दिखायी देते हैं, जैसे—टीकोज़ी]

दक्षिणा—(चाय पीते हुए) हाय, मैं तो भूल ही गयी थी। आठ बजे तो सेल-मीटिंग है। क्या बजा? ओ बाबा...आठ?

(भागने को होती है।)

एमन—अब क्यों भाग रही हो? लोगों को देखने दो कि एमन की पत्नी आठ बजे तक बगासियाँ लेती है।

दक्षिणा—(शरारत के साथ) अरे सारा दोष मेरा ही है क्यों? और तुम?

[तेज़ी से हँसती हुई भाग जाती है। दक्षिणा के जाने के तुरन्त बाद कामरेड अहमद, विभूतिभूषण, माणिक, कान्ता प्रवेश करते हैं! किसी की भूषा में कोई विशेषता नहीं है। केवल अहमद शेरवानी पहने हैं। विभूतिभूषण एक सदरी पहने है तथा माणिक चादर डाले हुए है। कान्ता लेडीज ढंग का पूरी बाँह का बादामी पुलोवर पहने है।]

अहमद—नमस्कार एमन बाबू!

एमन—(खड़े हो कर) आइए जनाब!

विभूतभूषण—कहिए, मैं ने तो अहमद साहब पहले ही कहा था कि एमन साब ऐसे आदमी नहीं हैं कि कोई चीज़ उन पर असर करे, चाहे वह इंनकलाब हो या बीवी ! (सब हँसते हैं ।) देखिए वैसे ही तैयार नहा-धो कर बैठे हैं ।

अहमद—अब हमें क्या खबर थी कि एमन साब इस कदर उसूल-पसन्द होंगे । हम समझे अदीब हैं, कुछ तो रूमानी माहौल दक्षिणा जी ने पैदा किया ही होगा ।

(सब हँसते हैं ।)

कान्ता—दीदी कहाँ हैं ? सो रही होंगी शायद । शादी के बाद से तो बस...

अहमद—मैं इस लड़की से बार बार कह चुका हूँ कि देखो, शादी कर लो । न सही पार्टी कामरेड, मगर शादी कर डालो ! शादी के बाद ही कोई सही मानी में कम्यूनिस्ट हो सकता है । मगर अजीब फितरती हैं ये लोग, ज़ाती कोई रिश्ता नहीं और चले हैं दुनिया से रिश्ता जोड़ने ।

कान्ता—अब रहने भी दीजिए बड़े भाई । जब देखो पुराण खोल कर बैठ जाते हैं ।

अहमद—खुदा की कसम, रिवाल्यूशन में तो अभी ख़ासी देर है, कब तक उसका रास्ता देखोगी ? क्या इंकलाब से ही इरादा है ? ये माणिक कैसा है कान्ता ?

(सब ठहाका मारते हैं, कान्ता भाग जाती है ।)

विभूतिभूषण—आप भी हद करते हैं अहमद साब !

अहमद—अमां, एक तो जवानी यों ही गर्म होती है, दूसरे सिर पर इंकलाब का लावा लिये घूमते हैं—शादी नहीं करेंगे तो क्या पागलख़ाने जायेंगे !

[सबका ठहाका । तब तक दक्षिणा आती है । पीछे पीछे झेंपती सी कान्ता भी आती है ।]

दक्षिणा—(**स्वच्छ वस्त्र में, एकदम स्नात भोर कमल सी**) क्यों बेचारी कान्ता के पीछे पड़े हैं आप लोग ?

अहमद—ज़रा इनकी पैरवी सुनिए। मैंने तो बड़े भाई का मशविरा दिया। जाने दो ज़ाती मसला है, नहीं बोलेंगे। मगर दक्षिणा जी! अपने छोटे भाई माणिक का भी अब कुछ बन्दोबस्त कर दो—यह क्या कि खुद तो...

(सब फिर ठहाका मारते हैं।

दक्षिणा—(**शरारत के साथ**) क्यों माणिक! लोगों से कहता फिरता है और अपनी शेष दी से कहने में झेंपता है?

(माणिक झेंप जाता है—सब की हँसी।)

अहमद—अब मैं ने कान्ता से यही कहा कि माणिक से क्यों नहीं कोशिश करती। खैर भाई होगा।

विभूतिभूषण—(**बड़े गम्भीर ढंग से**) और कौन नहीं आया माणिक?

माणिक—अफ़ज़ल अलीगढ़ गये हैं।

अहमद—क्या हिन्दी वालों को बंद करने के लिए ताले ख़रीदने?

(सब हल्के हँसते हैं।)

कान्ता—ओफ़, किस कदर इंकलाबी है यह अफ़ज़ल भी।

अहमद—तभी तो इंकलाब आ नहीं पा रहा है। एक मुल्क में एक ही चीज़ तो पनप सकती है—इंकलाब या इंकलाबी!

(सब हल्के हँसते हैं।)

विभूतिभूषण—नयी पार्टी लाइन के बारे में चर्चा कर ली जाय, क्यों अहमद साब?

अहमद—बेशक। और फिर तुम तो उस का प्रेक्टिकल डिमान्सट्रेशन देख के आ रहे हो।

माणिक—कामरेड विभूतिभूषण हमें किसान आंदोलन के बारे में बतायें और समझायें कि पार्टी लाइन के द्वारा हमारे मूवमेंट ने क्या रुख अपनाया है।

विभूतिभूषण—साथियो, मुझे ज्यादा कुछ नहीं कहना है। हिन्दुस्तान की आज़ादी के बारे में मुल्क में सियासी चेंजेस हुए हैं। आपको मालूम है कि मुल्क के

सभी प्राविन्सेस में आम हड़तालें हो रही हैं। बम्बई में नाविकों की हड़ताल का हो जाना, तेलंगाना का मूवमेंट आदि बातों ने पार्टी को अहसास कराया कि यह हिस्टोरिकल पीक है। दूसरी सियासी जमातों के साथ-साथ सरकार के नकाब भी उलटे हैं। लाठी चार्ज, पुलिस एक्शन आदि से सिद्ध होता है कि मुल्क में पुलिस राज है। हमारी पार्टी ने अवाम की इन मुख़्तलिफ़ जंगों को तवारीखी अहमियत दी है और हम आज उनके कंधे से कंधा मिला कर चल रहे हैं। हमारे प्रान्त का किसान आंदोलन भी इस बड़ी जंग का एक हिस्सा है। बस यही कहना था।

माणिक—अहमद साब !

अहमद—इस ज़बानी बयान में और तवारीखी वाकयात में गहरा सम्बन्ध है। जिनकी गूँजें हमें गैरकम्यूनिस्टी पर्चों तक में मिलती हैं। आपको मालूम ही है कि इस पार्टी काँग्रेस में नयी पार्टी लाइन की मैंने मुख़ालिफ़त भी की थी। मौजूदा नेहरू सरकार, ख्वाह कैसी ही हो, हमारे अपने लोगों की है। नेहरू, जनता के नेता हैं, नुमाइन्दे हैं, उन्हें चांगकाई शेक मानना बहुत बड़ी गलती होगी। हमें वर्डिक्ट आफ़ दि हिस्ट्री के लिए वेट करना चाहिए। लेकिन इस कहने के बावजूद भी हमारे साथियों ने फ़ायर पालिसी इख्तियार की है। मैं अब भी इसे स्यूसीडिकल मानता हूँ, मगर पार्टी डिसिप्लिन के मातहत इस फ़ैसले की तामील करना मेरा फ़र्ज़ है। पार्टी ने जो पैग़ाम कामरेड एमन और दक्षिणा के लिए भेजा है। उसे पार्टी सेक्रेटरी माणिक अभी आपको सुनायेंगे। हालाँकि ज़्यादा अच्छा तो यह था कि हमारे लीडर अदीबों से दूसरे बेहतर काम कराते, क्योंकि समाज या पार्टी में सभी जगह अदीब का दर्जा सबसे ऊँचा होना चाहिए !

माणिक—पार्टी ने एमन बाबू और दक्षिणा दीदी दोनों को तुरन्त किसान आंदोलन का काम सम्हालने का ज़िम्मा दिया है।

एमन—जैसा कि अहमद भाई ने कहा कि लेखक का समाज में ऊँचा स्थान होना चाहिए, यह बहुत सही है। चाहे यह बात मुझ जैसे लेखक के लिए सही न हो, मगर साहित्य पर राजनीति का यह अंकुश अनुचित है। यह बात दूसरी है कि समय की माँग के कारण साहित्यकार सिपाही बन जाय, किन्तु साहित्यकार का माध्यम दूसरा है—जिसे हमारे नेता नहीं समझते। हम पार्टी की आज्ञा पर चले जायेंगे। पार्टी ने इतना बड़ा काम हमें सौंपा, यह भी बहुत बड़ी बात है, किन्तु जब तक पार्टी के नेता इस तथ्य को ग्रहण नहीं करते, तब तक वे ग़लतियाँ करेंगे। राजनीतिज्ञ को अपनी सुपीरियारिटी दूर करनी होगी।

जहाँ तक नयी पार्टी लाइन का प्रश्न है—मैं समझता हूँ कि यह महान भूल है। सन् ४२ से भी भयंकर भूल है यह। गांधी या जवाहर इस देश की जनता के प्रतीक हैं—इसे अस्वीकारना मूर्खता है। यह प्रभाव लाख प्रतिक्रियावादी है, पर आज गांधी या नेहरू की आवाज राष्ट्रवाणी है, उन्हें चुनौती देकर पार्टी हीराकरी कर रही है।

माणिक—दीदी, आप कुछ कहना चाहती हैं?

दक्षिणा—मैं तो कभी भी फायरईटर्स में से नहीं थी, इसीलिए सभी कोई मुझे बूर्जुआ कम्यूनिस्ट ही कहते रहे। मुझे भी ऐसा लगता है कि अहमद साब तथा एमन से मैं सहमत हूँ। यह बात दूसरी है कि पार्टी की आज्ञा मानना मेरा धर्म है, लेकिन यह नीति ग़लत है।

माणिक—मैं आपकी बातें आगे भेज दूँगा।

[तब तक दक्षिणा बीच में उठ कर जाती है और कालीपद चाय की ट्रे, नाश्ता आदि लाता है।]

अहमद—(**बड़े निश्चिन्त भाव से**) तो मीटिंग बर्ख़ास्त?

माणिक—जी हाँ।

अहमद—खैर दोस्त, खुदा हाफ़िज़। तवारीख किसी को मुआफ़ नहीं करती, चाहे वह गाँधी हो या मार्क्स।

एमन—सही बात यह है अहमद साब कि आज कम्यूनिस्टों को गाँधी की आवश्यकता है और गाँधीवादियों को मार्क्स की।

(सब क्षण भर को चौंकते हैं।)

अहमद—आपने एकदम ठीक फ़रमाया लेकिन......

दक्षिणा—(हँसते हुए) अहमद भाई, ये भी यही बात कह कर हमेशा लेकिन लगाते रहे हैं।

अहमद—तो फिर मुझे कुछ नहीं कहना।

एमन—आर यू रियली लीविंग इण्डिया आन डेपुटेशन ?

अहमद—अफ़कोर्स। एवरी वन आफ़ अस इज़ आन डेपुटेशन बाई द हिस्ट्री। हाउ इट मेटर्स हीयर आर देयर।

(सब हँसते हुए चाय नाश्ता करते हैं।)

(पटाक्षेप)

पञ्चम अंक

सूत्र दृश्य ५

[मंच पर सहसा वही अंधकार, उपरान्त प्राथमिक दृश्य—जेल । चाँदनी जा चुकी है । जेल अहाते के लेम्प-पोस्ट की बत्ती पीताभ उभर आयी है । अँधेरा घिर आया है । ठण्डी हवा बहने लगी है । समुद्र गर्जन अपनी नींद छोड़ तटों की उथल-पुथल करने में लगा है ।

इस ठण्डी प्रत्यूष बेला में जेल के कांस्य घण्टे चार बजाते हैं—उपरान्त चार का गजर बजता है ।]

संतरी—(दूर से डाक स्वर) गार्ड ! सात नम्बर सेल ! ताला बेड़ी आलरेटऽऽ !

गार्ड—(उसी रीत) सात नम्बर सेल ! ताला बेड़ी आलरेटऽऽ !

संतरी—(और दूर से डाक स्वर) गार्ड ! बार नम्बर सेल ! ताला बेड़ी आलरेटऽऽ !

[संतरी गार्ड की प्रतिसतर्कता पृष्ठभूमि में डूब जाती है । एमन जेल का अहाता घूर रहा है ।]

एमन—(स्वगत) अंधकार में लज्जा ढँकने की क्षमता होती है—विशेष रूपे प्रत्यूष के पूर्व का आंधार सबसे अधिक असितवर्णी होता है । कारण कि परिवर्तन के व्यक्तित्व की तीक्ष्णता अनुभव समग्रता-तीव्र हो उठती है । न कुछ अनन्त है, न स्थिर । निरपेक्षता ही मृत्यु है और सापेक्ष्यता ही जीवन । प्रत्येक की गतिशक्ति है । कोई क्षणों में जीवित है, धावित है तो कोई वर्ष और संवतों में । इसी सापेक्ष्य भाव में कम गतिशील को हम स्थिर मानते हैं । और जब यह गति योनियों के माध्यम से धावित

होती है, उसे हम मृत्यु मान कर निश्चिन्त हो जाते हैं। जीवन—सृष्टिगति की दृश्यगति है, जबकि मृत्यु—सृष्टिगति की अदृश्यगति है।

(मंच पर सहसा अंधकार हो जाता है।)

प्रथम दृश्य

[एक छोटा सा कमरा, जिस में चटाई पड़ी है। चटाई पर खेस बिछा है। दीवार पर स्तालिन का प्रसिद्ध चित्र—जिसमें वे एक हाथ कोट के बटनों के पास अन्दर किये खड़े हैं—लगा है। दीवार पर नीले रंग की पृष्ठभूमि में उड़ते श्वेत कपोत वाला प्रसिद्ध भित्ति-चित्र कीलों से ठुका है। किसी पार्टी कामरेड का घर है। किसान आंदोलन के कार्य के लिए एमन और दक्षिणा यहाँ आये हैं, इसलिए खाली करवा कर इन्हें दे दिया गया है। स्तालिन के चित्र के ऊपर ही गौतम तथा गाँधी के चित्र हैं जो स्पष्ट है कि एमन ने लगवाये होंगे, क्योंकि एमन इन तीनों को तप, शक्ति एवं निष्ठा के प्रतीक मानता है।

तभी सहसा एमन को एक हाथ से दक्षिणा और दूसरे से कुछ अन्य कामरेड पकड़े प्रवेश करते हैं। एमन के सिर पर पट्टी बँधी है, रक्तस्राव हो रहा है। दो एक साथी बढ़ कर खेस पर तकिया आदि लगाते हैं। दक्षिणा एमन को तकिये के सहारे लिटाती है। दक्षिणा रुई से रक्त साफ़ करती है। तब तक कस्बे का डाक्टर आ जाता है। कुछ देर तक डाक्टरी चलती है। दक्षिणा के मुख पर कठोरता एवं पीलापन दोनों ही हैं। डाक्टर युवक है।]

डाक्टर—(दक्षिणा से) ज्यादा चोट नहीं है। कम्पाउण्डर शाम को ड्रेसिंग कर जायेगा।

दक्षिणा—चोट गहरी तो नहीं है डाक्टर ? सेप्टिक का तो डर नहीं है ?

(और पर्स से पाँच रुपये का नोट निकाल कर देती है ।)

डाक्टर—नॉट एट आल, नथिंग टु वरी । (नोट को न लेते हुए) यह क्या ?

दक्षिणा—(किंचित हँसते हुए) इट इज़ यूवर राइट डाक्टर ।

डाक्टर—(अपना बेग उठाते हुए) आप नहीं जानतीं कि मैं एमन बाबू का रेगूलर पाठक हूँ । यह तो मेरा सौभाग्य है कि मैं ने अपने प्रिय लेखक के दर्शन किये ।

दक्षिणा—लेकिन यह तो आपकी फ़ीस है ।

डाक्टर—दक्षिणा जी, यदि आप फ़ीस देना ही चाहती हैं तो एमन साब के हस्ताक्षर दिलवा दीजिए ।

[सब के मुख पर प्रसन्नता झलक उठती है । दक्षिणा एक सादा कागज़ लेने बढ़ती है ।]

डाक्टर—यों नहीं, इस पर चाहिए ।

[और 'रक्तगाछ' की एक प्रति निकालता है तथा दक्षिणा को उसे देता है ।]

एमन—(पुस्तक पर हस्ताक्षर करते हुए) तो तुम्हें भी रक्तगाछ प्रिय है ? (हँसते और पुस्तक डाक्टर को वापस देते हुए) लो पढ़ लो डाक्टर, क्या लिखा है ।

डाक्टर—(पढ़ते हुए) जो राजनीति, जो साहित्य, जो विज्ञान मानव को मानव से काटता है, श्रेष्ठ सिद्ध करता है, अपंग करता है, उससे डाक्टर, तुम्हारे सर्जिकल अस्त्र और मेरी लेखनी दोनों ही युद्ध करें । एवमस्तु—एमन ।

[डाक्टर गद्‌गद होकर नयनों में चमक लिये प्रणाम करके चला जाता है ।]

एमन—(पार्टी कामरेड जगजीत से, जो पंखा झल रहा है।) रहने दो जगजीत ! थक गये होगे।

[जगजीत स्थानीय पार्टी सेक्रेटरी है, नवयुवक है। कुरता पायजामा पहने है। सुता हुआ व्यक्तित्व है।]

दक्षिणा—(पंखा जगजीत से लेते हुए) लाओ मुझे दो !

एमन—भाई, तुम दोनों ही रहने दो !

बरेन—(बंगाली नवयुवक कामरेड है, मीठा सा युवक है।) लाओ दीदी मैं करूँगा।

जगजीत—एमन दा ! राजकीय हस्तक्षेप इस सीमा का तो बहुत बुरा है। मीटिंग पर लाठी चार्ज इज़ नथिंग बट ब्रूटेलिटी।

एमन—हम सब को, पार्टी को आवेश छोड़ना होगा। गांधी के संयम को मार्क्स की दृष्टि दो जगजीत ! मैं इस आंदोलन को निर्माणात्मक बनाना चाहता हूँ—पार्टी और तुम लोग उसे दूसरी दिशा देना चाहते हो।

जगजीत—इस प्रयोग से कुछ नहीं होने का। हम इस स्थिति में नहीं हैं कि प्रयोग करें और साफ़ बात है एमन दा कि गांधीवादी प्रणाली हमसेक कोई सम्बन्ध नहीं।

एमन—(हँसते हुए) कोई गैरकम्यूनिस्ट यदि सत्य कहता है तो क्या तुम उसे अस्वीकार दोगे ?

बरेन—पर दा ! विल इट नॉट बी ए डेवीएशन फ्राम दि पार्टी लाइन ?

एमन—चाहे इतिहास से डेविएशन हो जाये, क्यों ? भूल तो सभी कर सकते हैं न ?

जगजीत—लेकिन पार्टी ने जिस आधार पर आंदोलन चलाने के लिए कहा है वह भी तो महत्वपूर्ण है।

एमन—इसीलिए तो आंदोलन चला रहा हूँ, किन्तु नीति को साँचेवत् आचरित करना तो मूर्खता है। मार्क्स ने जो सत्य कहे हैं, तब वे विशेष युग और

परिस्थिति में कहे थे। ये तो वे नहीं कह गये कि बस—इसके बाद सोचना बन्द कर दो। गांधी जी ने भी कुछ सोचा है, बरेन भी कुछ सोचता है। मनुष्य को मशीन चाहते हो!

[तभी **नरेन नामक एक पार्टी कामरेड पार्सल लाता है और दक्षिणा को देता है। वह खोलती है।**]

दक्षिणा—(**प्रसन्नता के साथ**) अरे, 'पकी फ़सलें' छप गया।

[**एक प्रति एमन को देती है। जगजीत और बरेन भी 'पकी फ़सले" देखते हैं।**]

बरेन—जब फ़सलें पक गयीं तो हमारे हँसिये उन्हें जनता के लिए काट लेंगे।

एमन—(**हँसते हुए किताब दक्षिणा को लौटाते हुए**) ये कागजी फ़सलें पकी हैं बरेन! जो कि आज नहीं मार्क्स के समय में ही पक गयी थीं। देखें दिलों और खेतों में कब पकती हैं।

जगजीत—एमन दा! तो आप २०० किसानों वाले इस मुकदमें में तो चल नहीं सकेंगे?

दक्षिणा—भला ये कैसे जा सकते हैं?

बरेन—लेकिन दीदी, सरकार जिस निर्दयता से गोली और गिरफ़्तारी कर रही है उससे तो......

एमन—तो हम भी तो उसी प्रकार थाने, खज़ाने लूट रहे हैं। (**व्यंग्य भरी हँसी**) प्रत्येक अपनी स्थिति बनाये रखना चाहता है, यह ठीक है, किन्तु व्यक्तित्व की, कर्म की एक सीमा वह भी आ जाती है कि जहाँ शत्रु अपने शस्त्र एवं सेना के साथ भी परास्त हो जाता है।

जगजीत—यह सामंतवादी आदर्शवाद है, इतिहास ने इसे उठा कर जाने कब का ताक में रख दिया है।

एमन—(कुछ रोष, कुछ गम्भीर, कुछ निश्चयात्मक ढङ्ग से) तो जगजीत ! मेरा यह निश्चय सुन लो कि विध्वंस के अग्निस्वरूप में यदि मुझे जीवन की पीपिलका की भी गति के दर्शन नहीं होते तो मुझे अलग ही समझो इस आंदोलन से।

(सब दिग्विमूढ़ से देखते रह जाते हैं।)

दक्षिणा—(कहीं दूर देखते हुए) तो क्या तुममें वह अग्नि समझौता कर रही है ?

एमन—(तकिये के सहारे बैठते हुए) समझौता ? छोटे-छोटे स्वार्थों की सिद्धि के लिए सिद्धान्तहीन होकर किया जाता है। किन्तु जब बृहत सत्य के साथ व्यक्ति-सत्य समझौता करता है तब वह समर्पण करता है ऋत् बनने के लिए। तब विद्रोह, तपस की संज्ञा लेता है। मेरा इस सरकार से विद्रोह है, इस नयी पार्टी लाइन से विद्रोह है। फिर भी यहाँ आया, इसलिए कि बृहत सत्य यहाँ धावमान है, उसमें अपने को आत्मसात कर दूँ। मैं गांधी की भाँति इस सत्यरथ की गति को यह कह कर नहीं रोकूँगा कि हिंसा हो गयी। क्योंकि तब तो सत्य की स्थिति ही संशय में हो जायगी। यही करूँगा कि मुझ में का तपस और प्रज्जवलित हो।

जगजीत—एमन दा ! दर्शन द्वारा मैं किसान आंदोलन चलाने के पक्ष में नहीं हूँ। यह राजनीति है। एवरी थिंग इज़ फ़ेयर इन लव एण्ड वार।

एमन—(पीड़ित हास्य संगे) नो, माय ब्याय, लाइफ़ इज़ नाट पॉलिटिक्स बट एथिक्स। मेरे लिए जीवन पूजा है, प्रत्येक व्यक्ति देवता है।

जगजीत—(उठते हुए) जैसा आप समझें। अभी तो मैं मुकदमे के फ़ैसले के लिए जा रहा हूँ। लेकिन आज ही मुझे सारी रिपोर्ट देकर लाइन आफ़ एक्शन क्लीअर करवानी होगी।

एमन— (संयत आदेश से) जाओ, और इसे उन्हें अवश्य बतलाना। पा[illegible] कुछ भूलें की हैं, किन्तु इस भूल से उसकी स्थिति की चूलें तक हिल ज[illegible]

इतिहास के इतने बड़े विरोधाभास को कोई भी मनीषी नहीं समेट पायेगा जगजीत ! जीवन को तार्किक नहीं भक्त चाहिए ।

(सब उठ कर चले जाते हैं ।)

दक्षिणा—यह क्या किया आपने ?

एमन—कुछ नहीं दक्षिणा ! गौतम के लिए जीवन दुःख था; मार्क्स के लिए वर्ग-क्रांति और गांधी के लिए उपवास !—ये सब आंशिक सत्य हैं दक्षिणा ! गांधीवादियों के अपने साँचे हैं तो कम्यूनिस्टों के भी साँचे हैं । इन्हें अपने ही अनुरूप लोग चाहिएँ—ये लोगों के अनुरूप नहीं होना चाहते । मार्क्स ने इतिहास के आधार पर नीति बनायी थी । ये नीति के माध्यम से इतिहास बनाते हैं ।

दक्षिणा—मार्क्सवाद कोई डॉगमा नहीं, वह परिवर्तनशील जीवन-दर्शन है ।

एमन—यही तो चीन में माओ ने सिद्ध किया है, किन्तु हमारे यहाँ......अपने से बाहर के निरीक्षणों को भी सच्चे कम्यूनिस्ट को समेटना होगा और यह चीन वाले तभी कर सके, जब वे पहले चीनी बने । हम कम्यूनिस्ट, भारतीय नहीं हैं । यहाँ की परम्परा और संस्कृति को वैज्ञानिक दृष्टि हमने नहीं दी । इस अर्थ में गांधी भारतीय राजनीति के गुरु हैं । साहित्यकार, दत्तात्रय होता है दक्षिणा ! वह कई गुरुओं का एक साथ शिष्य हो सकता है, लेकिन राजनीति असहिष्णुओं का दल होता है ।

दक्षिणा—लेकिन तुम्हारा आंदोलन से हाथ खींच लेना ठीक नहीं हुआ । क्या तुम इस किसान आंदोलन के सारे उत्तरदायित्व को भी अस्वीकार दोगे ?

एमन—उत्तरदायित्व के दो भाग होते हैं दक्षिणा ! एक यश, दूसरा अपयश । मैं अपयश का ही अधिकारी हूँ । जो कुछ भी आंदोलन में लूट, हत्या आदि हुए हैं उसका भार मैं कभी नहीं अस्वीकारूँगा । इधर जो पुलिस थाने और

खज़ाना किसानों ने लूटा—वह मैंने किया है दक्षिणा !—अपने किसी भी कर्म पर पश्चाताप मुझे नहीं है।

(सभी जगजीत हाँफता आता है।)

जगजीत—सुनिए पुलिस आ रही है। आप यहाँ से निकल चलिए...और... (जेब में हाथ डालते हुए)......पार्टी ने आर्डर्स भेजे हैं।

दक्षिणा—(आर्डर्स लेकर पढ़ती है)...पार्टी लाइन से डेवीएट करने के कारण तथा अनुत्तरदायी ढंग से पार्टी की आलोचना बाहर खुल्लमखुल्ला करने के कारण पार्टी एमन और दक्षिणा दोनों को एक्सपेल करती है।...ये क्या ?

एमन—अब तक हम एक पार्टीज़न थे अब सर्वहारा हो गये दक्षिणा !

दक्षिणा—लेकिन यह बात गलत है। पार्टी इज़ आवर लाइफ़ एण्ड सोल, हाउ केन वी बी एक्सपेल्ड ?

एमन—यह भी एक स्थिति होती है दक्षिणा ! सुनो जगजीत ! एक बात स्वीकारोगे ?

जगजीत—आप आज्ञा करें एमन दा !

एमन—दक्षिणा को यहाँ से फ़ौरन ले जाओ क्योंकि...ये...

दक्षिणा—(एमन से लिपटते हुए) नहीं, सो नहीं होने का एमन ! मैं तुम्हारे ही साथ जाऊँगी...नहीं...

(रोती है।)

एमन—नहीं जानता दक्षिणा ! कि आगे क्या हो, किन्तु तुम्हें मेरे लिए, अपने भावी शिशु के लिए, हमें सृजित करने वाले उस जीव के लिए जाना ही होगा—जाओ—ले जाओ जगजीत इन्हें। जाओ दक्षिणा। (कुछ आदेशात्मक ढंग से) जाओ...

जगजीत—चलो दीदी ! पुलिस आ रही है।

दक्षिणा—(जिसे जगजीत हाथ पकड़े ले जाता है—रोते हुए) एमन ! ...एमन !...आमार जीवन !

(जगजीत और दक्षिणा चले जाते हैं। कुछ क्षण शांति उपरान्त)

एमन—जाओ दक्षिणा...गयीं...ठीक हुआ...फिर से......

सम्मुखे आपार आँधार,
यात्राशिखर दुर्निवार;
समाहित उद्घोष,
भाँगे गिये उद्बोध,
चिन्तय तट !
स्वीकारो महा ज्वार !!

(तभी पुलिस आती है। एमन आँखें बंद कर लेटा है।)

(पटाक्षेप)

द्वितीय दृश्य

[अदालत का कमरा। दर्शकों से कमरा भरा हुआ है। माणिक, विभूतिभूषण आदि कामरेडों के साथ दक्षिणा बैठी हुई है। एक दम सिर से पैर तक काले वस्त्रों में। उसके मुख पर गर्भकाल के अंतिम दिनों का पीलापन स्पष्ट है। उसकी आँखें सूजी हैं। कठघरे में एमन दो चार बंदियों के साथ बैठा है। उसके मुख पर शांति, क्षमा और निष्ठा का अद्भुत मिश्रण है। मुकदमे की सारी पैरवी हो चुकी है। अदालत के कमरे में गांधी और जवाहरलाल नेहरू के हँसते हुए चित्र लगे हैं।]

न्यायाधीश—(तीन बार टेबल बजा चुकने पर एमन से) आपको कुछ कहना है ?

एमन—मुझे कुछ नहीं कहना।

न्यायाधीश—राजद्रोह, राज सम्पत्ति की लूट, राज्य व्यवस्था को उलट देने के लिए लोगों को भड़काने के दण्ड में एमन को प्राण-दण्ड दिया जाता है।

दक्षिणा—(चीख-पड़ती है) प्राण-दण्ड...हीं...हीं...(रो पड़ती है हथेलियों में मुँह छिपा कर माणिक के कंधे पर सिर टिका देती है) प्राण दण्ड !

न्यायाधीश—बाकी के काशीराम, रघुनाथ तथा जगन्नाथ को दस वर्षों का सपरिश्रम कारावास।

[अदालत में शोर बढ़ जाता है। पुलिस गारद बंदियों को घेर कर सतर्क हो जाती है। न्ययाधीश टेबल बजाते हैं। कहीं भीड़ में से कोई चिल्ला पड़ता है—कामरेड एमन ज़िन्दाबाद ! इंकलाब जिन्दाबाद ! दक्षिणा बढ़कर एमन की ओर दौड़ती है। उसका पेट बढ़ा हुआ है। उसके पीछे माणिक, विभूति भी दौड़ते हैं। पुलिस इन्सपेक्टर दक्षिणा को रोक देता है।]

दक्षिणा—एमन यह क्या हुआ ?

[और रो पड़ती है। एमन की आँखें भी गीली हो उठती हैं। वह अपने हथकड़ी वाले हाथों से दक्षिणा के कंधे पकड़ कर हिलाता है।]

एमन—तो ! तुमने कहा था, याद है न कि मुझ से पूछ कर ही जाते। अच्छा, तो आज जा रहा हूँ, बोलो जाऊँ न ?

[दक्षिणा एमन के चरणों के पास रोती हुई गिर पड़ती है और गले में आँचल डाल पदधूलि माँग में लगाकर वहीं ढह पड़ती है। माणिक उसे उठाता है।]

एमन—दक्षिणा ! इस क्षण मुझे मृत्यु का रहस्य समझ में आ रहा है। वह यह कि हम सृष्टि को श्रेष्ठ बनाने के लिए जल्द से जल्द जाकर पुराने वस्त्र

त्याग कर, फिर से नव जन्मा होकर लौटें। सुनो अग्निम या अग्निमा कोई सा नाम रख देना।

पु० इन्सपेक्टर—एमन साब। अब चलिए।

एमन—(**हँसते हुए**) चलो भाई, अब तो यात्रा ही यात्रा है, दच्छिणा !

(**वह मूर्छित हो जाती है।**)

(**पटाक्षेप**)

तृतीय दृश्य

[**मंच पर सहसा अंधकार हो जाता है। जेल का वही प्राथमिक दृश्य उभर आता है। एमन वैसे ही सींखचे पकड़े खड़ा है। वह गहरी साँस लेकर मंच की ओर मुँह करता है। वातावरण यथावत्**]

एमन——तो...तो...दच्छिणा ! तुम परसों आयी थीं। शायद है...नव शिशु ...अग्नि ? नहीं अग्निमा... ओ नतून ! पुरातन को विदा दो... दच्छिणा, तुमने ही मानव जीवन में प्रेम, घर और परम्परा—इन तीनों से परिचय कराया...कहो क्या कहूँ...तुम्हें ?

(**पृष्ठभूमि में जेल के कैदियों की रामधुन सुनायी पड़ती है।**)

(**हलके हँसते हुए**) तो कैदियों की प्रार्थना की बेला हो गयी ? ... तो फाँसी...क्योंकि एमन ने विद्रोह किया। जो सब मानते हैं वह यदि आप नहीं मानते तो वह विद्रोह है...इसलिए सब जीते हैं, अतएव आपको फाँसी दी ही जानी चाहिए !

[**तभी पुलिस गारद आती है। जवान ताला खोलता है। पुलिस इन्सपेक्टर, जेलर सभी हैं।**]

जेलर—चलिए एमन बाबू!

[एमन बिना कुछ कहे उनके साथ कोठरी से बाहर निकलता है। चार सिपाही आगे, चार सिपाही पीछे हो जाते हैं। गारद को 'मार्च' का हुक्म दिया जाता है। वे मार्च करते हुए चले जाते हैं। कुछ क्षण तक मंच पर खाली कोठरी दिखता है।

तभी जेल के कांस्य घंटे में पाँच बजते हैं। पुलिस की सीटियाँ। और लखन आँखें पोंछते हुए कोठरी के दरवाजे बंद करता है।]

(पटाक्षेप)